RISE&ACT

गांधीजी और उत्तर प्रदेश

डॉ सौरभ बाजपेयी

सीनियर फ़ेलो

राजीव इंस्टिट्यूट फॉर सोशल एम्पावरमेंट एंड एक्टिव सिटीजनशिप ट्रेनिंग (RISE & ACT) कार्यक्रम

राजीव गाँधी फाउंडेशन

जवाहर भवन

नयी दिल्ली

Contents

- गांधीजी, पायनियर और शुद्ध न्याय- प्रयागराज,1896.....3

- परमात्मा की दया पर जिसे शंका हो, वह ऐसे तीर्थ-क्षेत्रों को देखे- काशी, 1902.....4

- श्री गांधी भारत के ज्योति स्तम्भ बन जायेंगे- हरिद्वार, 1915.....6

- स्वराज्य दान के रूप में कदापि नहीं मिलेगा- काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, 1916.....9

- “रोजी कमाना सबसे सुगम बात होनी चाहिए और हुआ करती है”- हरिद्वार, 1916.....12

- सत्याग्रह में पराजय की कल्पना ही नहीं है- इलाहाबाद, 1919.....14

- “ब्रिटिश हुकूमत इस समय शैतान की प्रतिमूति है”- लखनऊ, 1919.....15

- “इस राज्य और रावण-राज्य में कोई फर्क नहीं है”- इलाहाबाद, 1921.....17

- “यह लड़ाई धर्मयुद्ध है’- काशी, 1921.....17

- “इस वक्त सारे हिन्दुस्तान की हवा खराब हो गयी है”- लखनऊ, 1925.....19

- “जो असत्य है, उसका हिन्दू-धर्म से सम्बन्ध नहीं हो सकता”- सीतापुर, 1925.....20

- “हमारे लिए इस युग का यज्ञ है चरखा”- काशी, 1926.....21

- आकाश से स्वराज्य टपकने वाला नहीं है- आगरा, 1929.....23

- नन्हे-से नैनीताल में पिछले सत्याग्रह के जमाने में काफी संख्या में लोग जेल हो आये हैं, बहुतों ने लाठियां खाई हैं- नैनीताल, 1931.....26

- मेरे लिए तो यह विशुद्ध सेवा और प्रायश्चित्त का ही आन्दोलन है- काशी, 1934.....28

- आज तो हम 'हिंदू धर्म' को भूल बैठे हैं- कानपुर, 1934.....30

- गांधीजी के उत्तर प्रदेश आगमन का तिथि-क्रमवार विवरण.....34

गांधीजी, पायनियर और शुद्ध न्याय

प्रयागराज,*1896*

उत्तर में गांधीजी का पहला पदार्पण प्रयागराज में हुआ।यह महज़ एक इत्तेफ़ाक वाली यात्रा थी।वो कलकत्ता-बम्बई मेल से राजकोट जा रहे थे।5 जुलाई को वो लगभग 11 बजे इलाहबाद पहुंचे।यहाँ गाड़ी 45 के लिए रूकती थी।गांधीजी को किसी दवाई की जरूरत थी।उन्होंने सोचा कि इतने समय में वो दवा लेकर वापस आ जायेंगे।साथ ही इलाहाबाद शहर की एक झलक भी उन्हें मिल जायेगी।लेकिन दवा लेने में ज़रा देर लग गई।गांधीजी जब स्टेशन वापस पहुंचे तो गाड़ी रेंग रही थी।गांधीजी अब उस पर चढ़ नहीं सकते थे।लेकिन स्टेशन मास्टर ने उनका सामान नीचे उतरवा लिया था।इस तरह उनका सामान बच गया।

अब उन्हें यहाँ एक दिन रुकना पड़ गया।गांधीजी ने तब तक दक्षिण अफ्रीका में प्रवासी भारतीयों के प्रति रंगभेद के खिलाफ़ आंदोलन का संगठन शुरू कर दिया था।गांधीजी ने इलाहाबाद में पायनियर अख़बार के संपादक से मिलने का निश्चय किया।इस पर गांधीजी लिखते हैं—

> "मैं केलनर के होटल में उतरा और वहीं से अपना काम शुरू करने का निश्चय किया। यहाँ (प्रयाग) के 'पायोनियर' पत्र की ख्याति मैंने सुनी थी। भारत की आकांक्षाओं का वह विरोधी है, यह मैं जानता था। मुझे याद पड़ता है कि उस समय मि० चेज़नी उसके सम्पादक थे। मैं तो सब पक्षों के आदमियों से मिलकर सहायता प्राप्त करना चाहता था। इसलिए मैंने मि० चेज़नी को, मुलाकात के लिए, पत्र लिखा। अपनी ट्रेन छूट जाने का हाल लिखकर उन्हें सूचित किया कि कल ही मुझे प्रयाग से चले जाना है।
>
> "उत्तर में उन्होंने तुरन्त मिलने के लिए बुलाया। मुझे खुशी हुई। उन्होंने गौर से मेरी बातें सुनीं। मुझे आश्वासन दिया कि “आप जो कुछ लिखेंगे, मैं उस पर तुरन्त टिप्पणी करूँगा। परन्तु में आपको यह वचन नहीं दे सकता कि आपकी सब बातों को मैं स्वीकार कर सकूंगा। औपनिवेशिक दृष्टि-बिन्दु भी तो हमें समझना और देखना चाहिए न ?"
>
> "मैंने कहा - "आप इस प्रश्न का अध्ययन करें और अपने पत्र में इसकी चर्चा करते रहें, इतना ही मेरे लिए काफी है। शुद्ध न्याय के अतिरिक्त में और कुछ नहीं चाहता।"

'पायनियर' का कार्यालय आज के आनन्द भवन से थोड़ी दूर प्रयाग स्टेशन के पास था। मि० चेज़नी से मिलने के बाद गाँधीजी त्रिवेणी-संगम गये और वहाँ स्नान-दर्शनादि किये। अगले दिन यानी 6 जुलाई को गांधीजी राजकोट के लिए रवाना हो गए.

परमात्मा की दया पर जिसे शंका हो, वह ऐसे तीर्थ-क्षेत्रों को देखे

काशी, *1902*

गांधीजी के काशी संबंधी अनुभव बहुत रोचक हैं।कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन से लौटकर वो उत्तर प्रदेश आये। यहाँ थोड़े समय काशी और आगरा गए।लेकिन काशी की अस्वच्छता पर उन्होंने तीखी टिप्पणियाँ कीं।वो धर्म के मर्मज्ञ थे, आडम्बर का निषेध करते थे।वो एक पण्डे के घर रुके।जैसा कि चलन था तीर्थस्थानों पर पण्डे अपने जजमान को घर पर रोकते थे।उस समय धर्मशालाएं तो थीं, होटल बहुत प्रचलित नहीं थे।वैसे भी भारत में अंग्रेजों के आने के पहले तीर्थाटन ही पर्यटन था.

पूरी श्रद्धा के साथ वो काशी विश्वनाथ के दर्शन करने गए।उसका विवरण उन्हीं की जुबानी सुनिए—

> “(काशी विश्वनाथ तक पहुँचने के लिए) संकरी- फिसलनी गली से होकर जाना पड़ता था। शान्ति का कहीं नाम नहीं। मक्खियाँ चारों ओर भिनभिना रही थीं। यात्रियों और दूकानदारों का हो-हल्ला असह्य मालूम हुआ।
>
> "जिस जगह मनुष्य ध्यान एवं भगवत चिंतन की आशा रखता हो, वहाँ उनका नामोनिशान नहीं, ध्यान करना हो तो वह अपने अन्तर में कर ले। हाँ, ऐसी भावुक बहनें मैंने जरूर देखीं, जो ऐसी ध्यान-मग्न थीं कि उन्हें अपने आस-पास का कुछ भी हाल मालूम न होता था । पर इसका श्रेय मन्दिर के संचालकों को नहीं मिल सकता । संचालकों का कर्त्तव्य तो यह है कि काशी विश्वनाथ के आस-पास शान्त, निर्मल, सुगन्धित, स्वच्छ वातावरण-क्या बाह्य और क्या आन्तरिक-उत्पन्न सुगन्धित, स्वच्छ वातावरण-क्या बाह्य और क्या आन्तरिक-उत्पन्न करें, और उसे बनाये रखें।
>
> “मन्दिर पर पहुँचते ही मैंने देखा कि दरवाजे के सामने सड़े हुए फूल पड़े थे और उनमें से दुर्गन्ध निकल रही थी । अन्दर बढ़िया संगमरमरी फर्श था । उस पर किसी अन्ध-श्रद्धालु ने रुपये जड़ रखे थे; रुपयों में मैल-कचरा घुसा रहता था।“

गंदगी, दिखावे के बाद चढ़ावे को लेकर गांधीजी का अनुभव सुनिए।गांधीजी लिखते हैं कि ‘भेंट रखने की मेरी जरा भी इच्छा न हुई, इसलिए मैंने तो सचमुच ही एक पाई वहाँ चढ़ाई’। इस पर पण्डाजी उखड़ पड़े । उन्होंने पाई उठाकर फेंक दी और दो-चार गालियाँ सुनाकर बोले- 'तू इस तरह अपमान करेगा तो नरक में पड़ेगा ।'

गांधीजी ने पलटकर पण्डे का विनम्र प्रतिवाद किया।वो बोले— 'महाराज ! मेरा तो जो होना होगा वह होगा, पर आपके मुँह से हलकी बात शोभा नहीं देती । यह पाई लेना हो तो लें, वर्ना इसे भी गंवायेंगे।' हालाँकि फिर पण्डे ने गांधीजी की पाई ले ली.

इस पर गांधीजी की टिप्पणी बेहद संजीदा है।यह गांधीजी के धर्म और धर्म के नाम पर चलने वाले पाखण्ड को उजागर करती है।गांधीजी लिखते हैं—

"परमात्मा की दया पर जिसे शंका हो, वह ऐसे तीर्थ-क्षेत्रों को देखे। वह महायोगी (अर्थात भगवन शिव) अपने नाम पर होने वाले कितने ढोंग, अधर्म और पाखण्ड इत्यादि को सहन करते हैं। उन्होंने तो कह रखा है—

'ये यथा मां प्रपद्यंते तांस्तथैव भजाम्यहम्।'

अर्थात् जैसा करना वैसा भरना । कर्म को कौन मिथ्या कर सकता है ? फिर भगवान् को बीच पड़ने की क्या जरूरत है? वह तो अपने कानून बतलाकर अलग हो गया।

इसके बाद गांधीजी एनी बेसेण्ट के दर्शन किये।वो उस समय थिओसोफी मूवमेंट को लेकर बहुत सम्मानित थीं। कांग्रेस के प्रति उनके रुख़ की वजह से भी वो सबकी प्रिय थीं।उनकी तबियत ख़राब होने के बावजूद उन्होंने गांधीजी को बुलाया।हालाँकि गांधीजी ने सिर्फ उनके दर्शन करके उन्हें आराम करने को कहा और वापस लौट आये।

Source: Image

श्री गांधी भारत के ज्योति स्तम्भ बन जायेंगे

हरिद्वार, *1915*

गांधीजी ने गोखले महाराज की सलाह पर एक साल का मौनव्रत धारण किया था।इस एक साल में उन्हें भारत को देखना-समझना था।कोई राजनीतिक टिप्पणी नहीं करनी थी।इसी क्रम में गांधीजी हरिद्वार में आयोजित कुम्भ मेले में शामिल हुए।यह महाकुम्भ 12 साल बाद आयोजित होने जा रहा था।चार्ली एंड्रूज़ ने उन्हें हरिद्वार में गुरुकुल कांगड़ी जाकर महात्मा मुंशीराम से जरूर मिलने को कहा था जो बाद में स्वामी श्रद्धानंद के रूप में विख्यात हुए।

गांधीजी ने हरिद्वार में आकर आहार-संबंधी एक व्रत लिया।यह व्रत था कि वो 24 घंटों में 5 ही वस्तुओं का वो भी सूर्यास्त से पहले सेवन करेंगे।हरिद्वार में गांधीजी कई आश्रमों में गए और कई दिन महाकुम्भ में रुके।गोखले द्वारा संचालित सर्वेन्ट्स ऑफ़ इंडिया सोसाइटी के वालंटियर यहाँ सेवा-कैंप लगाए हुए थे।हृदयनाथ कुंजरू इस सेवक दल की अगुवाई कर रहे थे।गांधीजी के साथ इस बार उनकी फ़ीनिक्स-टोली भी थी।उन्होंने भी महाकुम्भ में आने वाले तीर्थयात्रियों की सेवा-सुश्रुषा करने का निर्णय लिया।

Source: Image

इस दौरान गांधीजी अपने अनुभव में लिखते हैं—

> "हमने यह बात शान्ति-निकेतन में ही देख ली थी कि हिन्दुस्तान में भंगी का काम करना हमारा विशेष कार्य हो जायगा । स्वयंसेवकों के लिए वहाँ किसी धर्मशाला में तम्बू ताने गये थे । पाखाने के लिए डाक्टर देव ने गड्ढे खुदवाये थे, परन्तु उनकी सफाई का इन्तजाम तो वह उन्हीं थोड़े से मेहतरों से करा सकते थे, जो ऐसे समय वेतन पर मिल सकते थे । ऐसी दशा में मैंने यह प्रस्ताव किया कि गड्ढों में मल को समय-समय पर मिट्टी से ढाँकना तथा और तरह से सफाई रखना, यह काम फिनिक्स के स्वयं-सेवकों के जिम्मे किया जाय । डाक्टर देव ने इसे स्वीकार किया । इस सेवा को माँग कर लेने वाला तो था मैं, परन्तु उसे पूरा करने का बोझा उठाने वाले थे मगनलाल गांधी.

1915 तक गांधीजी भारत में कोई अपरिचित नाम नहीं थे।इसलिए उनके तम्बू में तमाम लोग उनके ही दर्शन करने आने लगे।गांधीजी के लिए यह एक नया अनुभव था।वो लिखते हैं—

> "मेरा काम वहाँ क्या था? डेरे में बैठकर जो अनेक यात्री आते उन्हें दर्शन देना और उनके साथ धर्म-चर्चा तथा दूसरी वातें करना। दर्शन देते-देते मैं घवरा उठा, उससे मुझे एक मिनट की भी फुरसत नहीं मिलती थी। मैं नहाने जाता तो वहाँ भी मुझे दर्शनाभिलाषी अकेला नहीं छोड़ते और फलाहार के समय तो एकान्त मिल ही कैसे सकता था? तम्बू में कहीं भी एक पल के लिए अकेला न बैठता।

हरिद्वार आकर उन्हें इस बात का अहसास हुआ कि “दक्षिण अफ्रीका में जो कुछ कार्य उन्होंने किये, उसका इतना गहरा असर सारे भारत में हुआ है।भले ही वो इससे ऊब गए हों लेकिन यह भारत में उनकी लोकप्रियता की पहली झलक थी।जहाँ सामान्य जन आकर उनके दर्शन कर रहे थे।स्वामी श्रद्धानन्द ने उनसे हरिद्वार में मिलने पर कहा था— “मुझे आशा है कि श्री गांधी भारत के लिए ज्योति स्तम्भ बन जायेंगे.” हरिद्वार में यह ज्योति स्तम्भ प्रज्ज्वलित होता दिखने लगा था।

यह ज्योतिस्तंभ दरअसल भारतीय समाज में आमूलचूल परिवर्तन की आलोचक दृष्टि रखता था।हरिद्वार में भी गांधीजी ने भारतीय समाज की कमियों-कमजोरियों को रेंखाकित किया।यहाँ भी उन्हें धर्म के नाम पर चलने वाले पाखण्ड के दर्शन हुए।गांधीजी लिखते हैं—

> "...इस भ्रमण में मैंने लोगों की धर्म-भावना की अपेक्षा उनकी लापरवाही, अधीरता, पाखण्ड और अव्यवस्थितता अधिक देखी। साधुओं के और जमातों के तो दल टूट पड़े थे। ऐसा मालूम होता था मानों वे महज मालपुए और खीर खाने के लिए ही जन्मे हों। यहाँ मैंने पाँच पाँव वाली गाय देखी। उसे देखकर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ, परन्तु अनुभवी आदमियों ने तुरन्त मेरा अज्ञान दूर कर दिया। यह पाँच पैरों वाली गाय तो दुष्ट और लोभी लोगों का शिकार थी। जीते वछड़े के पैर काटकर गाय के कन्धे का चमड़ा चीर कर उसमें चिपका दिया जाता था और इस दुहरी घातक क्रिया के द्वारा भोले- भाले लोगों को दिन-दहाड़े ठगने का उपाय निकाला गया था। कौन हिन्दू ऐसा है, जो इस पाँच पाँव वाली गाय के दर्शन के लिए उत्सुक न हो? इस पाँच पाँव वाली गाय के लिए वह जितना ही दान दे उतना ही कम।“
>
> "अब कुम्भ का दिन आया। मेरे लिए वह घड़ी धन्य थी। परन्तु मैं तीर्थ-यात्रा की भावना से हरद्वार नहीं गया था। पवित्रता आदि के लिए तीर्थक्षेत्र में जाने का मोह मुझे कभी न रहा। मेरा ख्याल यह था कि सत्रह लाख यात्रियों में सभी पाखण्डी नहीं हो सकते। यह कहा जाता था कि मेले में सत्रह लाख आदमी इकट्ठे हुए थे। मुझे इस विषय में कुछ सन्देह नहीं था कि इनमें असंख्य लोग पुण्य कमाने के लिए, अपने को शुद्ध करने के लिए आये थे परन्तु इस प्रकार की श्रद्धा से आत्मा की उन्नति होती होगी यह कहना असम्भव नहीं तो मुश्किल जरूर है।“

इस सम्बन्ध में शिखा यानी सिर पर रखी जाने वाली चोटी और जनेऊ का प्रसंग बहुत दिलचस्प है।ऋषिकेश में बहुत से संन्यासी गांधीजी से मिलने के लिए आये थे। उनमें से एक को ने उनके तीव्र धर्म-भाव को देखकर उनसे एक सवाल किया।क्योंकि उन्होंने धर्म-चर्चा करने वाले इस मर्मज्ञ सिर पर न चोटी देखी और न बदन पर जनेऊ। इससे उन्हें दुःख हुआ और उन्होंने कहा- 'आप हैं तो आस्तिक, परन्तु शिखा-सूत्र नहीं रखते, इससे हम- जैसों को दुःख होता है। हिन्दू धर्म की ये दो बाह्य संज्ञाएँ हैं और प्रत्येक हिन्दू को इन्हें धारण करना चाहिए ।'

गांधीजी ने इसका जो जवाब दिया, वो भारतीय समाझ के प्रति उनकी समझ और उस समझ के अनुरूप ख़ुद को ढ़ालने का प्रसंग है—

"जब मेरी उम्र कोई दस वर्ष की रही होगी तव पोरबन्दर में ब्राह्मणों के जनेऊ से बँधी चाबियों की झंकार मैं सुना करता था और उसकी मुझे ईर्ष्या भी होती थी। मन में यह भाव उठा करता कि मैं इसी तरह जनेऊ में चाबियाँ लटकाकर झंकार किया करूँ तो अच्छा हो। काठियावाड़ के वैश्य कुटुम्बों में उस समय जनेऊ का रिवाज नहीं था। हाँ, नये सिरे से इस बात का प्रचार अलवत्ता हो रहा था कि द्विज-मात्र को जनेऊ अवश्य पहनना चाहिए। उसके फलस्वरूप गाँधी- कुटुम्ब के कितने ही लोग जनेऊ पहनने लगे थे। जिस ब्राह्मण ने हम दो-तीन सगे-सम्बन्धियों को रामरक्षा का पाठ सिखाया था, उसी ने हमें जनेऊ पहनाया । मुझे अपने पास चाबियाँ रखने का कोई प्रयोजन नहीं था । तो भी मैंने दो-तीन चाबियाँ लटका लीं। जब वह जनेऊ टूट गया तब उसका मोह उतर गया था या नहीं, यह तो याद नहीं पड़ता, परंतु मैंने नया जनेऊ फिर नहीं पहना।

"बड़ी उमर में दूसरे लोगों ने फिर हिन्दुस्तान में तथा दक्षिण अफ्रीका में जनेऊ पहनाने का प्रयत्न किया था । परन्तु उनकी दलीलों का असर मेरे दिल पर नहीं हुआ । शूद्र यदि जनेऊ नहीं पहन सकता तो फिर दूसरे लोगों को क्यों पहनना चाहिए? जिस बाह्य चिह्न का रिवाज हमारे कुटुम्ब में नहीं था उसे धारण करने का एक भी सवल कारण मुझे नहीं दिखाई दिया। मुझे जनेऊ से अरुचि नहीं थी। परन्तु उसे पहनने के कारण का अभाव मालूम होता था। हाँ, वैष्णव होने के कारण में कण्ठी जरूर पहनता था। शिखा तो घर के बड़े-बूढ़े हम भाइयों के सिर पर रखवाते थे, परन्तु विलायत में सिर खुला रखना पड़ता था। गोरे लोग देखकर हसेंगे और हमें जंगली समझेंगे, इस शर्म से शिखा कटा डाली थी। मेरे भतीजे छगनलाल गाँधी, जो दक्षिण अफ्रीका में मेरे साथ रहते थे, वड़े भाव के साथ शिखा रख रहे थे। परन्तु इस वहम से कि उनकी शिखा वहाँ सार्वजनिक कामों में बाधा डालेगी, मैंने उनके दिल को दुखा कर भी छुड़ा दी थी। इस तरह शिखा से मुझे उस समय शर्म लगती थी।

"इन स्वामी जी से मैंने यह सब कथा सुनाकर कहा-- 'जनेऊ तो मैं धारण नहीं करूँगा, क्योंकि असंख्य हिन्दू जनेऊ नहीं पहनते हैं फिर भी वे हिन्दू समझे जाते हैं। में अपने लिए उसकी जरूरत नहीं देखता। फिर जनेऊ धारण करने के मानी हैं— दूसरा जन्म लेना अर्थात् हम विचार-पूर्वक शुद्ध हों, ऊर्ध्वगामी हों। **आज तो हिन्दू-समाज और हिन्दुस्तान दोनों गिरी दशा में हैं। इसलिए हमें जनेऊ पहनने का अधिकार ही कहाँ है? जब हिन्दू-समाज अस्पृश्यता का दोष धो डालेगा, ऊँच-नीच का भेद भूल जायगा, दूसरी गहरी बुराइयों को मिटा देगा, चारों तरफ फैले अधर्म और पाखण्ड को दूर कर देगा, तब उसे भले ही जनेऊ पहनने का अधिकार हो । इसलिए जनेऊ धारण करने की आपकी बात तो मुझे पट नहीं रही है।** हाँ, शिखा-सम्बन्धी आपकी बात पर मुझे अवश्य विचार करना पड़ेगा । शिखा तो में रखता था । परन्तु शर्म और डर से उसे कटा डाला । मैं समझता हूँ कि वह तो मुझे फिर धारण कर लेनी चाहिए । अपने साथियों के साथ इस बात का विचार कर लूंगा।'

...जबतक संसार में भिन्न-भिन्न धर्मों का अस्तित्व है तबतक प्रत्येक धर्म के लिए बाह्य संज्ञा की आवश्यता भी शायद हो, परन्तु जब वह बाह्य संज्ञा आडम्बर का रूप धारण कर लेती है अथवा अपने धर्म को दूसरे धर्म से पृथक् दिखलाने का साधन हो जाती है, तब वह त्याज्य है। आज-कल मुझे जनेऊ हिन्दू-धर्म को ऊँचा उठाने का साधन नहीं दिखाई पड़ता। इसलिए मैं उसके सम्बन्ध में उदासीन रहता हूँ।

स्वराज्य दान के रूप में कदापि नहीं मिलेगा

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, *1916*

1916 में वायसराय लार्ड हार्डिंग ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय का उदघाटन किया।इस मौके पर देश भर से गणमान्य लोगों को आमंत्रित किया गया।महामना मदनमोहन मालवीय ने इस मौके पर गांधीजी को भी सभा के संबोधन के लिए आमंत्रित किया।अपने से इतर विचार रखने वालों के साथ आत्मीय संबंध स्थापित करना गांधीजी की राजनीतिक पद्धति की विशेषता थी।मालवीयजी और विचार राजनीतिक मामलों में काफी अलग थे। लेकिन गांधीजी उन्हें अपना बड़ा भाई मानते थे।उधर मालवीय जी के भीतर भी गांधीजी को लेकर अपार स्नेह था।

बहरहाल, गांधीजी का यह भाषण कई मायनों में ऐतिहासिक हो गया।इस मौके का लाभ उठाते हुए गांधीजी ने कई आख्यानों को चुनौती दी।क्योंकि उन्हें इन्हें तोड़कर एक महाख्यान का निर्माण जो करना था।इसलिए यह अब तक चले आ रहे परम्परावादी भाषणों से एकदम भिन्न भाषण सिद्ध हुआ।उन्होंने गौरव-गान न करते हुए भारतीय समाज के पतन की चर्चा की।इसके अलावा देश के पुनरोद्धार के लिए नवीन आचरण की अपील थी। उन्होंने मंच पर आते ही छात्रों के बीच भाषण-कला के शिल्प को ही चुनौती दे डाली—

> "जिनके सामने आज में बोल रहा हूँ वे विद्यार्थी- गण तो एक क्षण के लिए इस बात को मन में जगह न दें कि जिस आध्यात्मिकता के लिए इस देश की ख्याति है और जिसमें उसका कोई सानी नहीं है, उसका सन्देश बातें बघार कर दिया जा सकता है। ....।मुझे आशा है कि किसी-न-किसी दिन भारत संसार को यह सन्देश देगा, किन्तु केवल वचनों के द्वारा यह सन्देश कभी नहीं दिया जा सकेगा। ...।मैं यह कहने की धृष्टता कर रहा हूँ कि हम भाषण देने की कला के लगभग शिखर पर पहुँच चुके हैं और अब आयोजनों को देख लेना और भाषणों को सुन लेना ही पर्याप्त नहीं माना जाना चाहिए; अब हमारे मनों में स्फुरण होना चाहिए और हाथ-पाँव हिलने चाहिए।"

Source: Image

फिर उन्होंने अंग्रेजी में सभा को संबोधित करने पर तंज कसा।जबकि यह उद्घाटन समारोह अंग्रेजी राज की छत्रछाया में पले-बढ़े लोगों का जमावड़ा था।इसके बाद उन्होंने स्वराज के विचार को वाक् की जगह कर्म से जोड़ा—

> ...कोई भी कागजी कार्रवाई हमें स्वराज्य नहीं दे सकती। धुआँधार भाषण हमें स्वराज्य के योग्य नहीं बना सकते। वह तो हमारा अपना आचरण है जो हमें उसके योग्य बनायेगा।

उनके इस भाषण में अक्सर सबसे ज्यादा चर्चा गांधीजी द्वारा हीरे-जवाहरात से लदे लोगों पर तंज की होती है—

> "..।मैंने हर अँधेरे कोने को मशाल जलाकर देखा है, और चूँकि आपने मुझे बातचीत की यह सुविधा दी है, मैं अपना मन आपके सामने खोल रहा हूँ। जिन महाराजा महोदय ने कल की हमारी बैठक की अध्यक्षता की थी, उन्होंने भारत की गरीबी की चर्चा की।..।किन्तु जिस शामियाने में वाइसराय द्वारा शिलान्यास समारोह हो रहा था, वहाँ हमने क्या देखा?
>
> एक ऐसा शानदार प्रदर्शन, जड़ाऊ गहनों की ऐसी प्रदर्शनी, जिसे देखकर पेरिस से आनेवाले किसी जौहरी की आँखें भी चौंधिया जातीं। जब में गहनों से लदे हुए उन अमीर- उमरावों को भारत के लाखों गरीब आदमियों से मिलाता हूँ तो मुझे लगता है कि में इन अमीरों से कहूँ— जब तक आप अपने ये जेवरात नहीं उतार देते और उन्हें गरीबों की धरोहर मानकर नहीं चलते तब तक भारत का कल्याण नहीं होता।“

यह मान्यता है कि गांधीजी की इसी बात को सुनकर श्रीमती एनी बेसेंट सभा छोड़कर चली गयी थीं।लेकिन ऐसा नहीं है।गांधीजी ने अपने भाषण में फिर भारत में अराजकता का प्रश्न उठाया।

उन दिनों भारत में क्रांतिकारी आंदोलन का प्रथम चरण चल रहा था।गांधीजी ने इस प्रवृत्ति की आलोचना की और इसे भय से जोड़ा।

इसी बीच श्रीमती बेसेंट ने उन्हें अपना भाषण जल्दी ख़त्म करने को कहा।इस पर गांधीजी ने कहा— 'मेरा ख्याल है कि में जो-कुछ कह रहा हूँ वह बिल्कुल ठीक है। मुझे अपना भाषण बन्द करने को कहा जायगा तो मैं वन्द कर दूँगा।'

इसके बाद उन्होंने अध्यक्ष को सम्बोधित करते हुए कहा कि 'महाराज! मैं आपके आदेश की प्रतीक्षा कर रहा हूँ। यदि आपकी समझ में मेरी इन बातों से देश और साम्राज्य को हानि पहुँच रही है तो मुझे अवश्य चुप हो जाना चाहिए।'

इस पर जनता ने कहिए-कहिए का शोर मचा दिया और अध्यक्ष ने गाँधीजी को आगे बोलने की अनुमति दी। गांधीजी ने इस चर्चा में आगे कहा—

> "यदि किसी दिन हमें स्वराज्य मिलेगा तो वह अपने ही पुरुषार्थ से मिलेगा। वह दान के रूप में कदापि नहीं मिलने का। ब्रिटिश साम्राज्य के इतिहास पर दृष्टिपात कीजिए। ब्रिटिश साम्राज्य चाहे जितना स्वातन्त्र्य-प्रेमी हो, फिर भी स्वतन्त्रता-प्राप्ति के लिए स्वयं उद्योग न करने वालों को वह कभी स्वतन्त्रता देने वाला नहीं है।"

इस समय फिर थोड़ी हलचल हुई और श्रीमती बेसेण्ट उठकर चल दीं। उनके साथ और भी कई बड़े-बड़े लोग उठकर चले गये और गांधीजी के व्याख्यान का अन्त यहाँ हो गया। बात इस हद तक बढ़ गई कि पुलिस कप्तान ने बनारस से गाँधीजी को तुरन्त बाहर चले जाने का आदेश निकाला परन्तु मालवीयजी महाराज के हस्तक्षेप से वह वापस ले लिया गया।

दरअसल, इस भाषण के अंत में गांधीजी कांग्रेस की परिपाटी पर प्रश्नचिन्ह लगा रहे थे।अभी तक कि कांग्रेस और उसके नेता संवैधानिक पद्धति में विश्वास रखते थे।उन्हें स्वराज के सम्बन्ध में अंग्रेजों की सदेच्छा की अपेक्षा रहती थी।इस मामले में लोकमान्य तिलक जैसे गरमदलीय नेता नए रास्तों की तलाश में थे।

एनी बेसेंट ने उस समय आयरलैंड की तर्ज़ पर होमरूल लीगों का गठन किया था।इसका उद्देश्य अंग्रेजों पर स्वशासन का दबाव बढ़ाना था।जबकि गांधीजी दक्षिण अफ्रीका के अपने प्रयोगों के माध्यम से सत्य, अहिंसा और सत्याग्रह की नई राजनीति, पद्धति और तकनीक लेकर आये थे।

Source: Image

“रोजी कमाना सबसे सुगम बात होनी चाहिए और हुआ करती है”

हरिद्वार, *1916*

इसी साल गांधीजी फिर हरिद्वार आये और उसके बाद इलाहबाद के म्योर कॉलेज में उन्होंने एक अन्य बहुत महत्वपूर्ण व्याख्यान दिया।इसमें उन्होंने आर्थिक उन्नति और नैतिक उन्नति के मापदंडों पर सवाल खड़े किये। उन्होंने कहा कि आर्थिक उन्नति का अर्थ हम सीमा-विहीन भौतिक प्रगति लगाते हैं और वास्तविक उन्नति को हम नैतिक प्रगति का पर्याय मानते हैं।

यह नैतिक प्रगति हमारे अन्तर में रहने वाले शाश्वत अंश के विकास के सिवा और क्या है? वो रोजमर्रा की जरूरतों को लेकर अपनी स्पष्ट दृष्टि रखते हैं।जीवित रहने का अधिकार, पेट भर भोजन और आवश्यकतानुसार तन ढकने के लिए कपड़े और रहने के लिए मकान— गांधीजी के मुताबिक़ यह मूलभूत आवश्यकताएँ हैं।

Source: Image

परन्तु वे यह भी कहते हैं कि इस काम के लिए हमें अर्थशास्त्रियों अथवा उनके द्वारा गढ़े गये विषयों की मदद की जरूरत नहीं है। “किसी भी सुव्यवस्थित समाज में”, गांधीजी कहते हैं, “रोजी कमाना सबसे सुगम बात होनी चाहिए और हुआ करती है”। और यह भी कि “निस्सन्देह किसी देश की सुव्यवस्था की पहचान यह नहीं है कि उसमें कितने लखपति लोग रहते हैं, बल्कि यह कि जनसाधारण का कोई भी व्यक्ति भूखों तो नहीं मर रहा है”।

इस अवसर पर गांधीजी ने फिर पश्चिमी भौतिक उन्नति के मापदंडों पर प्रश्नचिन्ह खड़े किये।अक्सर इस संबंध में गांधीजी द्वारा 1909 में लिखी गयी पुस्तिका ‘हिन्द स्वराज’ का ज़िक्र किया जाता है।यह व्याख्यान एक प्रकार से उनकी उस समझ का ही विस्तार है।वो लिखते हैं—

"यदि मेरा यह विश्वास न होता कि जिस हद तक हम आधुनिक भौतिकवाद के पीछे दीवाने बने रहेंगे उस हद तक हम उन्नति के मार्ग से दूर रह कर अवनति की दिशा में अग्रसर होंते जायँगे, तो मैंने आज जो इस प्रकार विस्तारपूर्वक अपनी बात आपके सामने रखने का प्रयास किया है सो कदापि न करता । मेरी धारणा है कि आर्थिक उन्नति .....।वास्तविक उन्नति के विरुद्ध पड़ती है। यही कारण है कि हमारा प्राचीन आदर्श धन-सम्पत्ति में वृद्धि करने- वाली गतिविधियों पर नियन्त्रण रखता रहा है।····· परमेश्वर और माया दोनों को एक साथ नहीं साधा जा सकता । यह अत्यन्त महत्वपूर्ण आर्थिक सत्य है । हमें इन दोनों में एक को चुन लेना है । आज पाश्चात्य देश भौतिकवाद रूपी राक्षस के पाँवों तले पड़े हुए कराह रहे हैं। उनकी नैतिक उन्नति को जैसे लकवा मार गया है; वे अपनी उन्नति का मानदंड रुपया, आना, पाई बनाये हुए हैं."

उत्तर प्रदेश की इसी यात्रा में उन्होंने फिर कांग्रेस के लखनऊ अधिवेशन में भाग लिया।इस अधिवेशन में उन्होंने गिरमिटिया मजदूरों के सम्बन्ध में एक प्रस्ताव रखा और वो पास हो गया।

दरअसल, गांधीजी 1916 से अपनी राजनीतिक समझ को प्रचारित करने लगे थे।अधिवेशन के अगले दिन उन्होंने भारतीय एक-भाषा और एक-लिपि सम्मेलन में बोलते हुए हिन्दी के प्रयोग का पक्ष लेते हुए अंग्रेजी के बोलबाले को चुनौती दी।इसके बाद उन्होंने मुस्लिम लीग के सम्मेलन में भी अनुरोध करने पर एक संक्षिप्त भाषण दिया।इस भाषण में उन्होंने हिन्दू-मुस्लिम एकता पर बल दिया और मिलजुलकर काम करने की जरूरत पर जोर दिया।

1917 और 1918 में उन्होंने बेहद संक्षिप्त दौरे किये।पहले वो चंपारण सत्याग्रह में व्यस्त रहे और उसके बाद उनका स्वास्थ्य ख़राब होने की वजह से वो आये तो उनकी सक्रियता कम रही।

Source: Image

सत्याग्रह में पराजय की कल्पना ही नहीं है

इलाहाबाद, *1919*

1919 में रौलट कमीशन के विरोध के चलते वो इलाहाबाद आये और यहाँ उन्होंने एक संक्षिप्त सभा को संबोधित किया।यह पहला अवसर था जब उन्होंने सत्याग्रह की बुनियादी शर्तों को राष्ट्रीय स्तर पर प्रचारित करना शुरू किया।इस मौके पर इलाहाबाद की एक सार्वजनिक सभा में उनका लिखा हुआ भाषण महादेव देसाई ने पढ़कर सुनाया—

> "(जो) व्यक्ति सत्याग्रह की शपथ लेना चाहता है, उसे शपथ लेने के पूर्व उस पर सांगोपांग विचार कर लेना चाहिए । उसे रौलट विधेयकों की मुख्य-मुख्य वातों को भी समझ लेना चाहिए और तसल्ली कर लेना चाहिए कि वे कितने आपत्तिजनक हैं। हर प्रकार का शारीरिक कष्ट सहन करने की क्षमता भी उसमें होनी चाहिए । सत्याग्रह में एक वार शामिल हो जाने पर पीछे मुड़ना हो ही नहीं सकता। सत्याग्रह में पराजय की कल्पना ही नहीं है। सत्याग्रही मरते दम तक संघर्ष करता रहता है । सत्याग्रही को उचित है कि अपने साथ शरीक न होनेवालों के प्रति सहनशीलता से काम ले....
>
> सत्याग्रह में हम आत्म-बलिदान अर्थात् प्रेम के द्वारा अपने विरोधियों को जीतने की आशा रखते हैं। यदि हम प्रतिदिन अपनी शपथ का पालन करते रहेंगे तो हमारे आस-पास का वातावरण शुद्ध हो जायगा ।..।हिंसा-मार्ग के समर्थकों की समझ में भी आने लगेगा कि..।गुप्त या प्रकट हिंसा की अपेक्षा सत्याग्रह कहीं अधिक समर्थ साधन है ।..."

इसके बाद 1920 में गांधीजी एक अखिल भारतीय आन्दोलन की तैयारी में जुट गए। इस साल की शुरुआत में उन्होंने इलाहाबाद, कानपुर, मेरठ, मुजफ्फरनगर, अलीगढ़ और काशी जैसे शहरों का दौरा किया।इस समय तक उनकी लोकप्रियता बेहद बढ़ चुकी थी।उनको मोटर या बग्घी में बैठाकर ले चलना मुश्किल था।क्योंकि लोग रास्ता रोककर उनके दर्शन करना चाहते थे।कई बार लोग उनके मार्ग के आगे-आगे दीपावली मनाते हुए चलते थे। इस प्रसंग में कानपुर में उन्होंने जो कहा वो जरूर पढ़ना चाहिए।उन्होंने कहा—

Source: Image

> "यूरोप की सबसे बड़ी ताकत से हमारी यह लड़ाई चल रही है। ऐसी लड़ाई में अगर हम विजय चाहते हैं तो हमें उसकी आवश्यक शर्तें समझ लेनी चाहिए । इनमें से एक शर्त है--संगठन की क्षमता ।.....।दूसरी शर्त है-हिन्दू-मुस्लिम एकता । यह एकता जबानी जमा-खर्च की नहीं बल्कि हृदयों की एकता होनी चाहिए । हिन्दुओं और मुसलमानों की समझ में ज्योंही यह बात आ जायगी कि उनके सहयोग के बिना ब्रिटिश शासन असम्भव है, और ज्योंही वे उन्हें अपना सहयोग देना बन्द कर देंगे, त्योंही विजय हमारे हाथ में होगी ।..."

“ब्रिटिश हुकूमत इस समय शैतान की प्रतिमूति है”

लखनऊ, *1919*

गांधीजी और उनकी अहिंसा के प्रति प्रतिबद्धता को लेकर तमाम अफवाहें फैलाई जाती हैं।कई बार उनकी अहिंसा को कायरता और कई बार तो उन्हें अंग्रेजों का एजेंट तक घोषित करने की मुहिम सोशल मीडिया पर चलाई जाती है।इस सन्दर्भ में गांधीजी ने 1919 के बाद से ही जिस तरह ब्रिटिश राज पर हमला किया था, उसे समझना जरूरी है।उन्होंने लखनऊ में ब्रिटिश राज को चुनौती देते हुए कहा—

> “ब्रिटिश हुकूमत इस समय शैतान की प्रतिमूति है और जो खुदा के वन्दे हैं वे शैतानियत के साथ मुहब्बत नहीं रख सकते। इस हुकूमत ने इतने घोर अत्याचार किये हैं कि यह खुदा और हिन्दुस्तान आगे तोवा न करे, तो जरूर मिट्टी में मिल जायगी । मैं तो यहाँ तक कहूँगा कि जवतक वह तोबा न करे, तवतक उसे मिटाना हर भारतीय का कर्तव्य है। सरकार की रंगरूटी में जाना नरक में जाने के समान है-- यह कहना यदि अपराध हो तो अवश्य ही यह अपराध करके पवित्र वनना प्रत्येक व्यक्ति का फर्ज है।
>
> ..।गुलामी में रहने से समुद्र में डूवना बेहतर है। यह सरकार डाकू से भी बुरी है । उसने हमारा सव छीन लिया है। इतना ही नहीं, वह तो हमारी आत्मा पर भी अधिकार करना चाहती है।..। हमें उससे इतना-भर कह देना है कि जबतक हमारा वित्त-मात्र ही नहीं, बल्कि हमारी इज्जत, हमारी आजादी वापस नहीं मिलती, तबतक तुमसे मुहब्बत रखना हराम है।"

इसके बाद गांधीजी 1920 में उत्तर प्रदेश नहीं आये।लेकिन उसके बाद वो असहयोग आन्दोलन की तैयारी में जुट गए थे।इस दौरान वो मुरादाबाद, अलीगढ़, कानपुर, लखनऊ, बरेली, झांसी, आगरा, काशी आदि शहरों में गए और जनता को आंदोलित किया।इस दौरान उन्होंने काशी में विद्यार्थोयों को संबोधित करते हुए जो कहा, वो ध्यान देने योग्य है।

वो दरअसल, ब्रिटिश राज के आर्थिक शोषण पर इस दौरान लगातार बोल रहे थे।लेकिन विद्यार्थियों से स्कूल-कॉलेज का बहिष्कार करने की उनकी अपील की आलोचना भी हो रही थे।इसी सन्दर्भ में काशी के इस भाषण में भी उन्होंने एक मार्मिक दृष्टांत देते हुए कहा—

> “...आप जिन परिस्थितियों में पढ़ते हैं, उनमें ऐसी ही शिक्षा मिलती है कि मन में मनुष्य का डर रखना पड़े । परन्तु में तो उसे सच्चा एम०ए० कहूँगा जिसने मनुष्य का डर छोड़कर ईश्वर का डर रखना सीखा हो । अंग्रेज इतिहासकार कहते हैं भारत में तीन करोड़ लोगों को दिन में दो बार पेट-भर खाने को नहीं मिलता ।
>
> बिहार में अधिकांश लोग सत्तू नामक निःसत्व खुराक खाकर रहते हैं। जब भुनी हुई मक्की का यह आटा, पानी और लाल मिर्चों के साथ गले के नीचे उतारते हुए मैंने लोगों को देखा तो मेरी आँखों से आग बरसने लगी ।
>
> ....।ऐसी स्थिति में आप निश्चिन्त होकर कैसे बैठ सकते हैं ? 'यदि हमें आजादी से खाने को न मिले तो हममें भूखों मरकर आजाद होने की ताकत आनी चाहिए । ...मैं कहता हूँ कि यह हुकूमत राक्षसी है, इसलिए उसका त्याग करना हमारा धर्म है। ·शान्तिमय असहयोग करने की ताकत आप में न आये, तो भारत नष्ट हो जायगा ।

उन्होंने आगे पंजाब में मार्शल लॉ के अत्याचारों का ज़िक्र करते हुए कहा—

> पंजाब में अत्याचार करनेवाली, छः-छः सात-सात वर्ष के बालकों को धूप में चलानेवाली, स्त्रियों का लाज लूटनेवाली हुकूमत के अधीन पाठशालाओं में पढ़ना मेरे खयाल से सबसे बड़ा अधर्म है । ...।मेरी आत्मा कितनी जल रही है, उसका मैं आपको अन्दाज नहीं करा सकता । इस राज-प्रथा के मातहत हमारी गुलामी बढ़ती ही जा रही है । और गुलाम जब गुलामी की जंजीर की चमक देखकर मुग्ध हो जाय तव उसकी गुलामी सम्पूर्ण हुई कहलाती है । मैं कहता हूँ, पैंतीस वर्ष पहले जो गुलामी थी, उससे अधिक गुलामी अब हममें है ।
>
> ..।आज तो आप ऐसी शिक्षा पा रहे हैं जिससे बेड़ियाँ और अधिक मजबूत हो जायँ । देश में जहाँ कितनों को पूरा खाना नहीं मिलता, जहाँ की स्त्रियाँ बदलने को दूसरे कपड़े न होने के कारण कई-कई दिनों तक स्नान नहीं कर पातीं, वहाँ आप लोगों को पढ़ने-लिखने के लिए बड़े-बड़े महल चाहिए ? देश के लिए दर्द हो, मेरे अन्दर जो आग जल रही है, वही आपके भीतर जल रही हो तो मकान-वकान की बात भूल जाइए और जैसा मैं कहता हूँ वैसा असहयोग कीजिए । मैं बार-बार कहता हूँ कि स्वराज्य तभी मिलेगा जब आप अपना धर्म पहिचानेंगे । जय-नाद करने से वह नहीं मिल सकता ।..।मैं कहता हूँ, आप इस धधकती आग से दूर हो जायँ, बिना किसी शर्त के विद्यालय छोड़ें। सात हजार बार गरज हो तो छोड़ें, नहीं तो वापिस चले जायँ । और छोड़ कर वापिस जाना हो तो छोड़ें ही नहीं । ..।अन्त में मैं आपसे कहता हूँ कि काशी विश्वनाथ आपको निष्कलुष बनायें, धैर्य दें और वह सभी कुछ दें जिसकी आपको आवश्यकता है ।"

गांधीजी स्कूलों और कॉलेजों के बहिष्कार की अपील कर रहे थे।क्योंकि उन्हें लगता था कि अंग्रेजी राज के समय की शिक्षा पद्धति हमें अंग्रेजों के प्रति वफादार बनाती है।यह हमारे स्वाभिमान को मिटाकर हमें भीरु या डरपोक बनाती है।इसलिए इस दौरे में उन्होंने लगातार विद्यार्थियों को संबोधित किया और उनसे बहिष्कार की अपील की।यहाँ तक कि काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में भी उन्होंने अपनी अपील को ज़ोरदार तरीके से दोहराया जबकि कौंसिल एंट्री के सवाल पर मालवीय जी के साथ उनके स्पष्ट और गहरे मतभेद थे।लेकिन राजनीतिक-वैचारिक मतभेदों के बावजूद मनभेद न उत्पन्न होने के तरीके गांधीजी के पास थे।इसलिए उन्होंने बार-बार अपने संबोधनों में मालवीय जी की राजनीतिक समझ का प्रतिकार करते हुए भी उनके प्रति अपने आदर एवं स्नेह का ज़िक्र भी बार-बार किया।

Source: Image

“इस राज्य और रावण-राज्य में कोई फर्क नहीं है”

इलाहाबाद, *1921*

इलाहाबाद के एक भाषण में उन्होंने ब्रिटिश राज की तुलना रावण राज से करते हुए कहा—

> इस राज्य और रावण-राज्य में कोई फर्क नहीं है।कुछ फर्क हो भी तो वह इतना ही है कि रावण के हृदय में कुछ दया होगी, कुछ कम दगा होगी। रावण को ईश्वर का भय तो था परन्तु हमारी हुकूमत तो खुदा को घोलकर पी गयी है। उसका खुदा तो उसका अहंकार, उसकी दौलत और उसकी दगा है। युरोपीय संस्कृत (संस्कृति) शैतानियत से भरी है परन्तु उसमें भी अंग्रेजी हुकूमत सबसे अधिक शैतानियत से भरी है।
>
> ..।मैं इसके आश्रय में एक क्षण भी नहीं रहना चाहता।..।आपको सरकार में मेरी तरह बुराई न दिखाई देती हो तो आप बेशक अपनी पाठशालाओं में पढ़ते रहें किन्तु यदि आप मेरे विचार के हैं तो इस हुकूमत की पाठशाला में गीता पढ़ना भी व्यर्थ है । .....।इस सारी शिक्षा में जहर भरा है क्योंकि वह हमें और पक्का गुलाम बनाने के लिए है। हमारी लड़ाई धर्म की है, सरकार की अधर्म की है। उसके साथ सम्बन्ध रखना अधिक हैवान बनने और ज्यादा पक्का गुलाम बनाने के बराबर है।“

“यह लड़ाई धर्मयुद्ध है”

काशी, *1921*

उसके बाद गांधीजी फरवरी 1921 में एक बार काशी आये।यहाँ उन्होंने सत्याग्रह के महत्त्व पर एक सार्वजनिक सभा में चर्चा की और स्वराज की जरूरत पर बल दिया।गांधीजी अब काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के समकक्ष काशी विद्यापीठ की स्थापना करते हैं।

उन्होंने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के बारे में जो कहा, वो बहुत महत्वपूर्ण है।क्योंकि मालवीयजी ने एक तो स्कूलों-कॉलेजों के बहिष्कार का विरोध किया था, दूसरा वो अंग्रेजों द्वारा स्थापित काउंसिलों के बहिष्कार के भी विरोधी थे।10 फरवरी 1921 को काशी विद्यापीठ का शिलान्यास करते हुए गाँधीजी ने अपने भाषण में कहा—

> "..।हमारी लड़ाई ऐसी है कि पिता को पुत्र के, पति को पत्नी के, पत्नी को पति के वियोग का दुःख सहना पड़ेगा। बाबू भगवानदास ने मधुर शब्दों में बताया है कि यह लड़ाई धर्मयुद्ध है। मुझे इस बात में जरा भी संशय नहीं रह गया है, नहीं तो मैं उस संस्था को कभी न छूता जिसके प्राण मालवीय जी हैं। मेरी आत्मा यही संस्था मेरी हो जाय या नष्ट हो जाय।
>
> ..।हमारे बिस्तरे के नीचे पचासों वर्ष से साँप छिपा है । हमें उसका पता नहीं था । आज हमें एकाएक इसका पता लगता है। हम उस बिस्तरे पर अब नहीं रह सकते। जितने विद्यालय सरकार के असर में हैं, उनसे हमें विद्या नहीं लेनी चाहिए। जिस विद्यालय पर उसकी ध्वजा फहराती है, वहाँ विद्यादान लेना पापकर्म है। यदि आप उसे पाप समझते हैं तो यहाँ चले आइए।

...।झोपड़ी में रहकर काम करना अच्छा है, महल में झण्डे की सलामी बुरी है। मैं यहाँ आ गया हूँ, इसका कारण यह है कि बाबू भगवानदास और बाबू शिवप्रसाद के दिलों में असहयोग की प्रतिष्ठा हो गयी है। असहयोग को बढ़ाने के लिए ही इस विद्यापीठ की स्थापना की गयी है। असहयोग ही हमारे लिए एक मात्र शास्त्र है।..।हमको राष्ट्र की सेवा करनी चाहिए। राष्ट्र के लिए हम सब काम करेंगे। हमें व्यापार को जुआ नहीं बनाना है। हम हिन्दुस्तान को पुण्यभूमि बनायेंगे।"

इस दौरे में गांधीजी ने कई अन्य जगहों पर भी सभाओं को संबोधित किया।इसके बाद वो फिर उत्तर प्रदेश आये। मार्च 1922 में गांधीजी गिरफ्तार कर लिए गए और उन्हें 6 वर्ष की सजा सुनाई गई।इसी दौरान जनवरी 1924 में उनका अपेंडिक्स का ऑपरेशन हुआ।फरवरी 1924 में सरकार ने उन्हें रिहा कर दिया।असहयोग आंदोलन से देश में जो माहौल बना था, वो धीरे-धीरे ख़त्म होने लगा।हिन्दू-मुस्लिमों के बीच एकता के प्रयास कई जगहों पर विफल होते दिखे।

कई जगहों पर दंगे हुए और गांधीजी ने 17 सितम्बर 1924 से खिलाफ़त आंदोलन के एक बड़े नेता मोहम्मद अली के घर पर 21 दिनों का उपवास किया।इधर कांग्रेस के अन्दर भी परिवर्तनवादी और अपरिवर्तनवादी धड़ों के बीच मतभेद सामने आ गए।काउंसिल एंट्री के सवाल पर कांग्रेस स्पष्ट रूप से बंटती दिखाई दी।गांधीजी ने इस फूट को रोकने के लिए मोतीलाल नेहरु और बाबू चितरंजन दास द्वारा स्थापित स्वराज पार्टी को एक प्रकार से कांग्रेस की बागडोर सौंप दी।इन वर्षों में गांधीजी उत्तर प्रदेश नहीं आ सके लेकिन उत्तर प्रदेश की घटनाओं पर वो लगातार अपने समाचार पत्र एवं अन्य स्थानों पर लिखते-बोलते रहे।

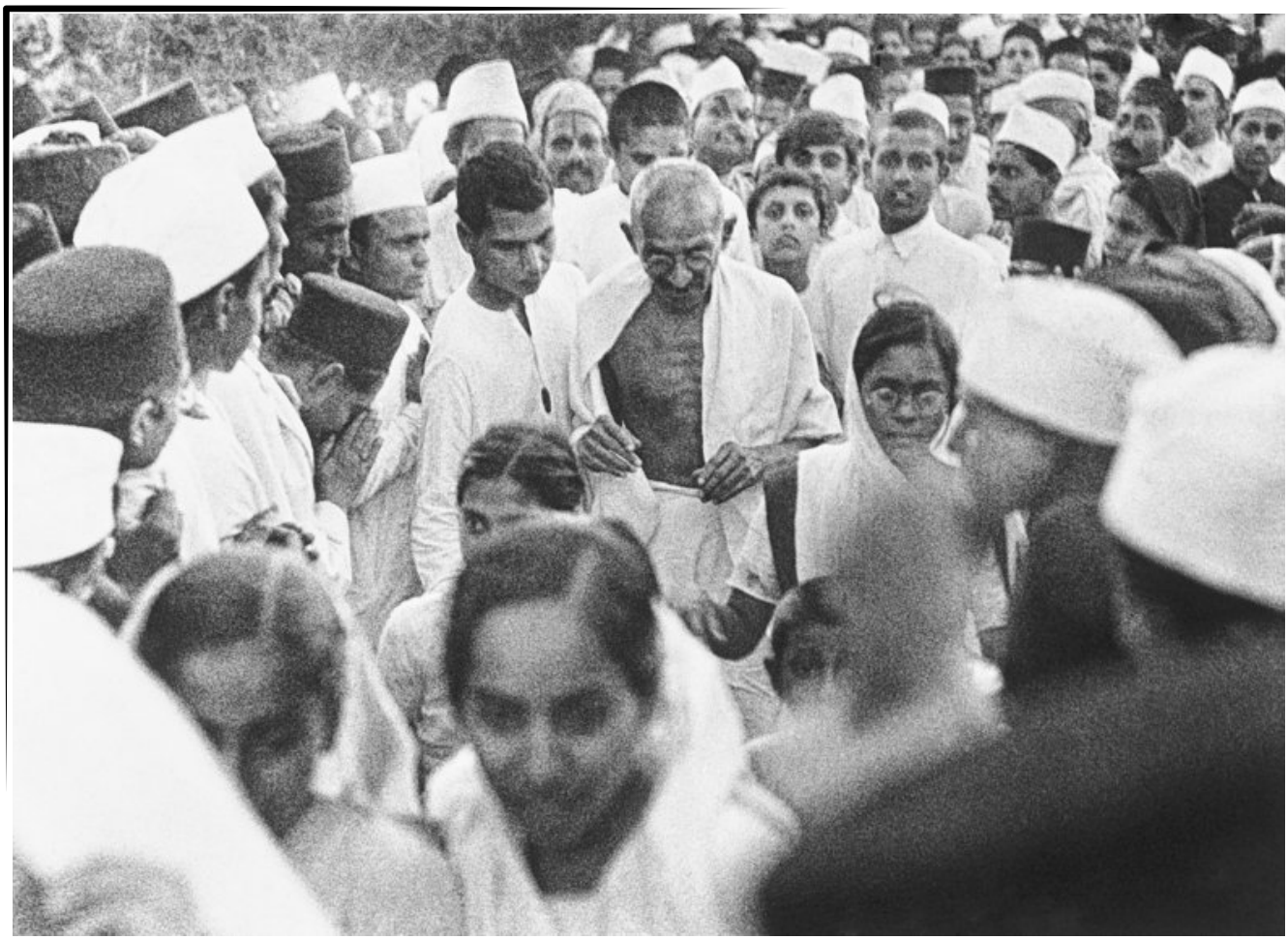

Source: Image

“इस वक्त सारे हिन्दुस्तान की हवा खराब हो गयी है”

लखनऊ, *1925*

इस अंतराल के बाद गांधीजी अक्टूबर 1925 में फिर उत्तर प्रदेश के दौरे पर वापस आये।इस बार उनका ध्यान खादी, चरखे, कौमी एकता और हिन्दुस्तानी के प्रचार-प्रसार पर रहा।इस दौरे में लखनऊ में उन्होंने लखनऊ नगरपालिका का अभिनन्दनपत्र स्वीकार किया और सार्वजनिक सभा में भी बोले। नगरपालिका की सभा शाम को 5 बजे हुई थी और उसमें मोतीलालजी तथा जवाहरलालजी उपस्थित थे। यह मानपत्र अरबी-फारसी बहुल उर्दू में लिखा गया था और ऐसा जान पड़ता था कि उसमें से एक-एक संस्कृत शब्द निकाल दिया गया है। इस पर गाँधीजी ने राष्ट्रभाषा के रूप की व्याख्या करते हुए कहा-

> "वह (राष्ट्रभाषा) लखनवी उर्दू या संस्कृतमय हिन्दी नहीं हो सकती, हिन्दुस्तानी हो हो सकती है। आप लोगों ने मानपत्र में अपनी त्रुटियाँ स्वीकार नहीं की हैं। जव मैं मोटर में आ रहा था तब पं० मोतीलालजी ने बताया था कि यहाँ की सड़कें कैसी हैं? सो मैं आप लोगों से कहता हूँ कि जैसी अच्छी आप लोगों की लखनवी उर्दू जबान है वैसी ही अच्छी आप यहाँ की सड़कों को भी बना दें। मैं आपको इसके लिए मुबारकबाद देता हूँ कि पिछले बोर्ड की अपेक्षा आपने अच्छा काम किया है।

उसके बाद उन्होंने लखनऊ के राजनीतिक माहौल पर तीखी टिप्पणी की।उन्होंने कहा—

> यह शर्म की बात है कि यहाँ के हिन्दुओं और मुसलमानों में वहुत अनबन है। इस वक्त सारे हिन्दुस्तान की हवा खराब हो गयी है। मैं कहता हूँ कि यदि हिन्दू और मुसलमान दोनों को लड़ना है तो लड़ लें पर आखिर इसका अंजाम क्या होगा? दोनों को यहीं रहना है। न हिन्दू हिन्दुस्तान छोड़ सकते हैं, न मुसलमान। आखिर में दोनों को यहीं रहना होगा, दोनों को मिलना होगा।..।मैं अभिनन्दनपत्र नहीं चाहता। मैं प्रशंसा सुनते-सुनते थक गया हूँ। पर मैं आप लोगों को यह जिम्मेदारी सौंपना चाहता हूँ कि जब मैं दूसरी बार लखनऊ आऊँ तो आप कह सकें कि इस बीच यहाँ झगड़ा नहीं हुआ और हिन्दू- मुसलमानों में मेल है। ईश्वर यहाँ के रहनेवालों को समझ दें।"

Source: Image

“जो असत्य है, उसका हिन्दू-धर्म से सम्बन्ध नहीं हो सकता”

सीतापुर, *1925*

इसके बाद गांधीजी सीतापुर पहुँचे। यहाँ उन्होंने हिन्दू धर्म पर एक सारगर्भित टिप्पणी प्रस्तुत की।इस सभा में उन्होंने हिन्दू सभा और वैद्य सभा का अभिनन्दनपत्र ग्रहण करते हुए कहा—

> "इन दो सभाओं द्वारा अभिनन्दनपत्र पाने के योग्य मैं नहीं हूँ, क्योंकि इनकी टीका-टिप्पणी के सिवा मैंने कुछ नहीं किया है। हिन्दू सभा की सच्ची सेवा करने के लिए सच्चा हिन्दू होना जरूरी है। हिन्दू धर्म सनातन धर्म है। वेदों तथा हिन्दू धर्म को में अनादि मानता हूँ। सत्य भी अनादि है। इसलिए हिन्दू धर्म और सत्य में कोई अन्तर नहीं। जो असत्य है, उसका हिन्दू-धर्म से सम्बन्ध नहीं हो सकता। मैं किसी भी दशा में सत्य का त्याग नहीं कर सकता। चाहे कितना भी विरोध हो, मैं सत्य ही कहूँगा।
>
> सत्य और अहिंसा में कोई अन्तर नहीं है। एक हिन्दू के रूप में मैं किसी के विरुद्ध अपने हृदय में द्वेषभाव पनपने नहीं दे सकता। मैं अपने शत्रु को भी प्यार से ही जीतूंगा। यदि हिन्दू अपने धर्म को आगे बढ़ाना चाहते हों और उसकी सेवा करने के इच्छुक हों तो उसका सवसे अच्छा तरीका यह है कि वे अहिंसा के मार्ग पर चलें। अपने धर्म का पुनरुद्धार करने के लिए अवश्य कार्य करें किन्तु अपने मुसलमान भाइयों के प्रति उनके हृदय में तनिक भी दुर्भावना नहीं होनी चाहिए।
>
> "कुछ लोगों का विचार है कि में अहिंसा के नाम पर कायरता का प्रचार कर रहा हूँ । यह बिल्कुल गलत है। हिंसा का मुकाबला अहिंसा से करना तो अच्छी चीज है किन्तु कायरता अच्छी चीज नहीं है। सच्ची अहिंसा के लिए सच्ची बहादुरी जरूरी है। हिन्दू संगठन के लिए चरित्र-निर्माण सबसे ज्यादा जरूरी है। जब तक यह नहीं होता, जब तक हर एक हिन्दू सत्य और सच्चरित्रता पर आरूढ़ नहीं होता, तब तक सच्चा संगठन असम्भव है। उस हालत में हिन्दू धर्म कहीं का न रह जायगा।"

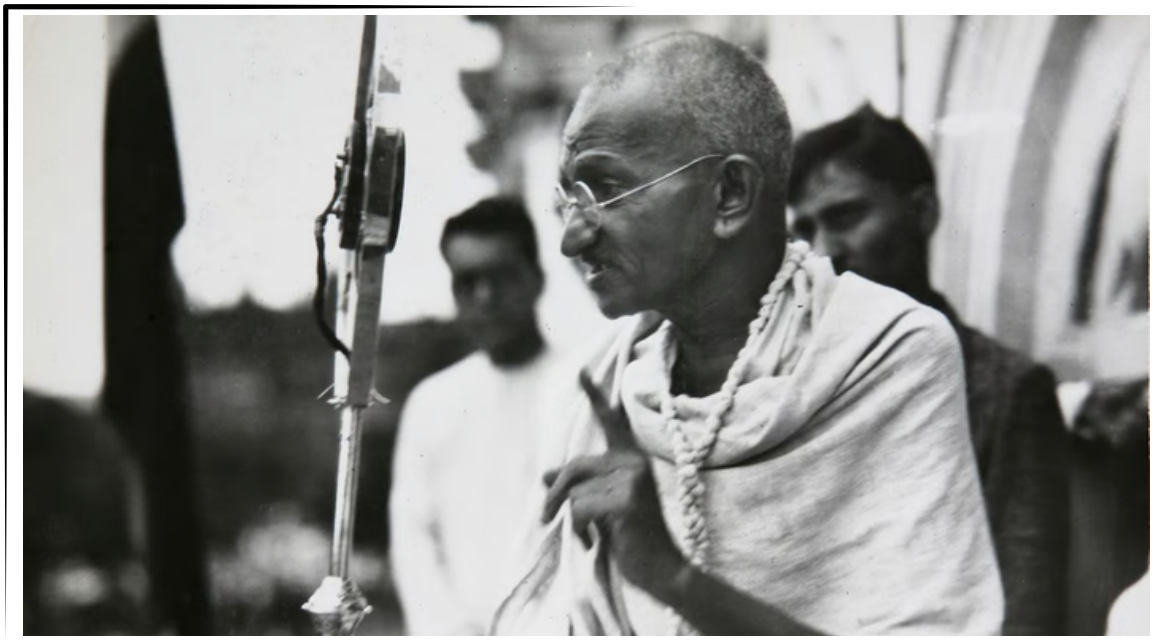

Source: Image

“हमारे लिए इस युग का यज्ञ है चरखा”

काशी, *1926*

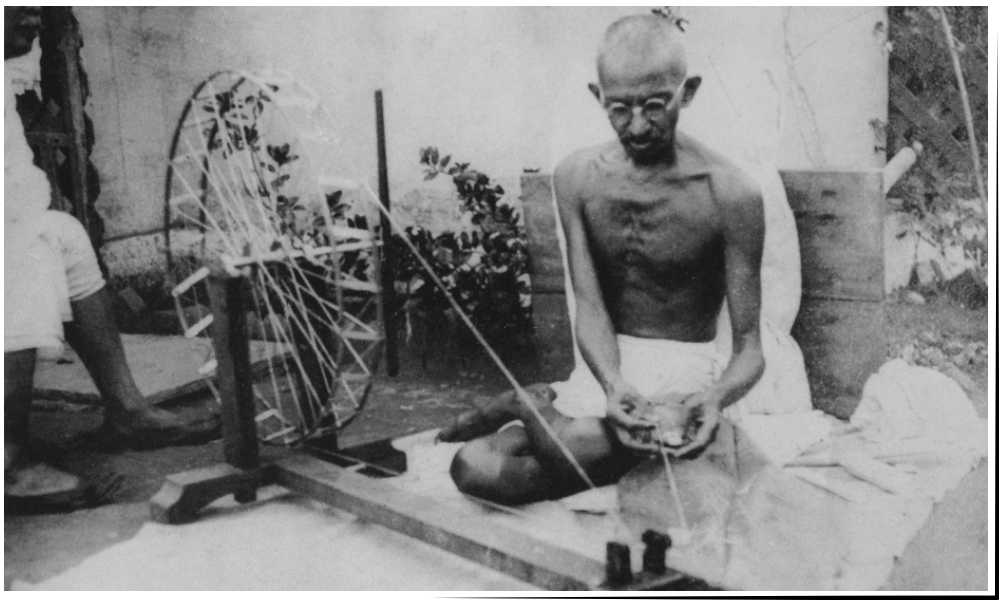

Source: Image

1926 में भी गांधीजी उत्तर प्रदेश आये।इस बार काशी में उन्होंने मालवीयजी के अनुरोध पर खादी के बारे में जो कहा वो बहुत महत्वपूर्ण है।यह एक तरह से उनके खादी-दर्शन का एक सार है—

> “पण्डित जी (मालवीयजी) ने तुम्हारे लिए लाखों जमा किये हैं और अव भी राजाओं-महाराजाओं से लाखों जमा कर रहे हैं, जो सच पूछा जाय तो इस देश के करोड़ों गरीबों की ही कमाई है। यूंरोप के विरुद्ध हमारे देश में धनियों का धन ऐसे गरीबों की गरीबी से बढ़ता है जिन्हें एक जून भी भरपेट भोजन नहीं मिलता। इस प्रकार तुम जो शिक्षा पाते हो उसका खर्च चुकाते हैं भुक्खड़ गाँववाले। मैं तुमसे उन गरीबों का जरा-सा बदला चुकाने को कहता हूँ। उनके लिए थोड़ा यज्ञ करो। गीता का वचन है कि जो यज्ञ किये बिना खाता है वह अपना भोजन चुराता है।
>
> ..।हमारे लिए इस युग का यज्ञ है चरखा; इसके विषय में में बरावर कहता या लिखता रहा हूँ। आज मैं और कुछ नहीं कहूँगा। यदि तुम्हारे दिलों पर गरीबों की इस करुण कहानी का कुछ भी असर पड़ा हो तो तुम कल कृपालानीजी के खादी भण्डार पर धावा करो और उसमें एक गज खद्दर भी बाकी न छोड़ो और आज अपनी जेबें खाली कर दो। पण्डितजी ने भिक्षा- कला में कमाल हासिल किया है। मैंने यह विद्या उन्हीं से सीखी है। अगर वह राजाओं-महाराजाओं पर कर बैठाने में उस्ताद हैं तो मैं भी गरीब लोगों की जेबें उनसे भी अधिक गरीबों के लिए खाली कराने में वैसा ही बेशर्म हूँ।"

इसके बाद गांधीजी का एक महत्वपूर्ण दौरा 1929 में हुआ।इस बार जवाहरलाल नेहरु के अनुरोध पर स्वास्थ्य लाभ की दृष्टि से उन्होंने पहाड़ों का रुख किया।यह पहला अवसर था जब गांधीजी ने इतना लंबा समय उत्तर प्रदेश के पहाड़ी क्षेत्रों में बिताया।हालाँकि इस दौरे में भी गांधीजी ने कई राजनीतिक सभाओं को संबोधित किया। लेकिन यहाँ उनके द्वारा किया गया हिमालय का वर्णन सर्वाधिक उल्लेखनीय है।कौसानी उन्हें विशेष तौर पर बेहद पसंद आया।अपनी कल्पनाशीलता में उन्होंने हिमालय पर एक बेहद सुन्दर टिप्पणी की—

"शिमला और दार्जिलिंग भी हिमालय के प्रदेश हैं, किन्तु वहाँ मुझे हिमालय की महिमा का भान न हो सका। वहाँ मैं रहा भी थोड़े ही समय तक, फिर भी मुझे तो वह प्रदेश एक अंग्रेजी बस्ती जैसा ही लगा। अलमोड़े आकर अलबत्ता मैं इस वात की कल्पना कर सका कि हिमालय क्या है।

यदि हिमालय न हो तो गंगा, यमुना, ब्रह्मपुत्र और सिन्धु भी न हों; हिमालय न हो तो ये नदियाँ न हों, न वर्षा हो और वर्षा न हो तो भारत रेगिस्तान या सहारा की मरुभूमि बन जाय। इस बात को जाननेवाले और सदैव हर बात के लिए ईश्वर का उपकार मानने वाले हमारे दीर्घदर्शी पूर्वजों ने हिमालय को यात्रा-धाम बना दिया था।

इस प्रदेश में हजारों हिन्दुओं ने ईश्वर की शोध में अपनी देह का बलिदान किया है। वे पागल न थे। उनकी तपश्चर्या का ही फल है कि आज हिन्दू-धर्म और हिन्दुस्तान जीवित है।

कौसानी के बारे में उन्होंने लिखा—

"कौसानी में सूर्य के प्रकाश में नाचती हिम-मण्डित शिखर-श्रेणी का दर्शन करते हुए मैं यह विचार कर रहा था कि हिमालय के इन धवल शिखरों को देखकर भिन्न-भिन्न कोटि के लोगों के मन में क्या विचार आयेगा।

उस समय जो विचार एक-पर-एक आते गये, पाठकों को भी उनका भागीदार बनाकर मन को हलका कर लेता हूँ।

"बालक उस दृश्य को देखें तो कह उठें, यह तो फेनों का पहाड़ है, पहाड़। चलो, हम दौड़ चलें और उस पर दौड़कर फेनी चखा करें। मुझ-जैसा चरखे का दीवाना कहेगा: कपास बीनकर, लोढ़कर और रुई पींजकर किसी ने रेशम-जैसी रुई का अखट पहाड़ खड़ा कर रखा है। इस देश के लोग कैसे पागल हैं कि इतनी रुई के रहते हुए भी नंगे-भूखे और मारे-मारे फिरते हैं!

धर्मनिष्ठ पारसी देखेगा तो सूर्यदेव को नमस्कार करता हुआ कहेगा: अभी हाल सन्दूक में से निकाली हुई नई, दूध-जैसी पगड़ी और वैसे ही इस्त्रीवन्द तह किये हुए जामें पहने पर्वत-रूप दस्तूर सूर्यनारायण के दर्शन में लीन होकर, हाथ जोड़कर, स्थिरचित्त खड़े हैं और शोभा बढ़ा रहे हैं।

भावुक हिन्दू इन जगमगाते और साथ ही सुदूर घने बादलों में से पानी झेलते हुए शिखरों को देखकर कहेगा: यह तो साक्षात् दया के भण्डार शिवजी अपनी उज्ज्वल जटा में गंगा जी को रोक रहे हैं और सारे भारत को प्रलय से बचा रहे हैं।

...शंकराचार्य अलमोड़ा में घूमे थे। उन्हें आज भी यह कहते सुन रहा हूँ— सचमुच यह अद्भुत दर्शन है, किन्तु सब ईश्वरीय माया है। न हिमालय है, न मैं हूँ, न तू है; जो कुछ है, वह है, ब्रह्म है। वही सत्य है, जगत् मिथ्या है। बोलो, ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या।

"पाठको ! सच्चा हिमालय तो हमारे हृदय में है। इस हृदय- रूपी गुफा में छिपकर उसमें शिव-दर्शन करना ही सच्ची यात्रा है, यही पुरुषार्थ है ।"

आकाश से स्वराज्य टपकने वाला नहीं है

आगरा, *1929*

सितम्बर 1929 से गांधीजी ने खादी के प्रचार-प्रसार के लिए उत्तर प्रदेश का लगभग ढ़ाई महीने लंबा दौरा किया। इस दौरे में उन्होंने तकरीबन ढ़ाई दर्जन जिलों को कवर किया।एक तरह से गांधीजी अब एक अगले अखिल भारतीय आंदोलन के लिए जनता को तैयार करने के लिए घूम रहे थे।आगरा से इस अभियान की शुरुआत करते हुए उन्होंने कहा—

> "मैं यहाँ असहयोग की शक्ति में अपने विश्वास की पुनर्घोषणा करने आया हूँ। आप सबको अभी से जनवरी 1930 के लिए तैयारी करनी है। भारतीय कांग्रेस कमेटी ने वे शर्तें निश्चित कर दी हैं जिनकी पूर्ति पर ही अहिंसात्मक उपायों से स्वराज्य की प्राप्ति हो सकती है। ये शर्तें हैं: खादी के द्वारा विदेशी वस्त्र-बहिष्कार, मादक द्रव्य-निषेध तथा हिन्दुओं द्वारा अस्पृश्यता का त्याग।
>
> चूँकि ये सब कार्य समुचित कांग्रेस-संगठन से ही सम्भव हैं इसलिए सदस्यों की भर्ती द्वारा कांग्रेस का पुनर्गठन आवश्यक है। मैं गम्भीर चेतावनी देता हूँ कि यदि हम कुछ न करेंगे, हाथ पर हाथ धरे बैठे रहेंगे तो केवल कांग्रेस की घोषणा मात्र से दिसम्बर में आकाश से स्वराज्य टपकने वाला नहीं है। मैं तो इसके आगे जाकर यहाँ तक कहना चाहूँगा कि यदि हमने बीच के काल में अपनी भावी घोषणा के लिए, जो 31 दिसम्बर 1929 की अर्द्धरात्रि तक राष्ट्रीय माँग की सरकार द्वारा पूर्ति न करने पर की जायगी, शक्ति न पैदा की, तो वह घोषणा भी निर्जीव और निष्प्रभाव-सी पड़ी रह जायगी।"

इस दौरे के बाद भारत के राजनीतिक परिदृश्य पर अब तक का सबसे बड़ा जनांदोलन उभरा।गांधीजी ने सविनय अवज्ञा आंदोलन छेड़ दिया था।बदले में सरकार ने सरदार पटेल को गिरफ्तार कर अपने मंसूबे जाहिर कर दिए थे।इस पर गांधीजी ने साबरमती आश्रम से डांडी के समुद्र तट तक यात्रा की।इस प्रसिद्ध यात्रा को डांडी यात्रा के नाम से जाना जाता है।

241 मील लम्बी यह यात्रा 12 मार्च से शुरू होकर 5 अप्रैल को समाप्त हुई।अगले दिन यानी 6 अप्रैल को गांधीजी ने डांडी के तट पर मुट्ठी भर नमक उठाकर नमक क़ानून को तोड़ा।पूरे देश में जैसे क़ानून भंग करने का जनोल्लास पैदा हो गया।तटीय इलाकों में नमक कानून और बाकी जगहों पर अन्य तरीकों से अंग्रेजी क़ानून भंग किये जाने लगे।जनता की भागीदारी इस बार असहयोग आन्दोलन की तुलना में बहुत अधिक थी।इस पर सरकार ने आन्दोलन का क्रूर दमन शुरू कर दिया।अंततः 4 मई 1930 को गांधीजी भी गिरफ्तार कर लिए गए। हालाँकि इस बार अंग्रेजी सरकार को झुककर गांधीजी के साथ गांधी-इरविन पैक्ट करना पड़ा और 5 मार्च को गांधीजी ने गांधी-इरविन पैक्ट पर हस्ताक्षर किये.

इसके बाद गांधीजी पंडित मोतीलाल नेहरु के अवसान पर लखनऊ और इलाहाबाद आये।इसका महादेव देसाई ने अपनी डायरी में बड़ा मार्मिक वर्णन किया है।महादेव भाई लिखते है कि ‘जवाहरलाल की हिम्मत की कोई सीमा नहीं थी। बापू उनकी माता को सांत्वना दे रहे थे, बगल में लेकर बैठे थे। शव को कहां अग्निदाह देना चाहिए इसकी बात चली। बापू ने तो लखनऊ में ही अग्निदाह देने की सलाह दी। इसलिए काशी, पंडितजी को फोन भी करवाया; लेकिन दूसरे सभी का इलाहाबाद ले जाने का मत हुआ; उसे आखिर मान लिया।

जब एक ओर पंडितजी को ले जाने की तैयारियां चल रही थीं, तब दूसरी ओर बापू के।टी।शाह के साथ गोलमेज परिषद के विषय में महत्व को बातें कर रहे थे; और बाद में पत्रों को निपटा रहे थे।' महादेव भाई आगे लिखते हैं—

> बापू पंडितजी का शव लेकर साढ़े ग्यारह बजे लखनऊ से निकले लेकिन रास्ते में दुर्घटना होने के कारण ठीक पौने पांच बजे पहुंचे। यहां हजारों की भीड़ जमा हो गई थी। थके हुए, आए। साथ में मालवीयजी की पत्नी थीं। इतना दैवी चेहरा मानो कभी नहीं देखा।
>
> [बापू] मुझसे कहते हैं 'ईश्वर कैसी परीक्षा ले रहा है! लोकमान्य के समय नई लड़ाई का प्रारंभ करना था; दास के समय भी ऐसा ही था; इस समय भी आज ही गोलमेज परिषद के प्रतिनिधि आ रहे हैं और नये ही काम की शुरूआत करनी है वहां पंडितजी को उठा लिया।'

श्मशान में हजारों लोग चिता के आसपास इकट्ठा हुए थे। श्यामजी ने बापू के द्वारा चंदन की लकड़ियां रखवाई। जवाहरलाल जी की शांत एवं प्रसन्न मुखमुद्रा अनुपम प्रभाव उत्पन्न कर रही थी। जवाहर ने अग्नि की सात बार प्रदक्षिणा की। उससे पहले बापू और पंडित मालवीयजी के सुंदर भाषण हुए। बापू ने अपने भाषण में कहा—

> 'आज भारत का एक महान नेता चल बसा है फिर भी आपके चेहरे पर शोक नहीं बल्कि हर्ष देख रहा हूं। ऐसा ही होना चाहिए। हममें से इस प्रकार नेता चले जाएं तो रोने का तो कोई कारण ही नहीं है। क्योंकि, जो हो रहा है उसका अर्थ यह नहीं है कि हम किसी निष्प्राण मिट्टी के पुतले का अग्निदाह कर रहे हैं। बल्कि आज राष्ट्र में एक महा बलिदान दिया जा रहा है उसके आप 1 साक्षी हैं।
>
> ऐसा अवसर मेरी जिंदगी में कोई पहला नहीं। लोकमान्य के समय भी इतनी भारी भीड़ जुटी थी। उस समय जो दृश्य देखा था वही दृश्य आज देख रहा हूं। लोग प्रार्थना कर रहे थे। संगीत गा रहे थे। उनमें एक प्रकार का हर्ष था। पहले तो मैं यह नहीं समझ सका; किन्तु मेरा मोह दूर हो गया तब समझा कि लोग तो ऐसा समझते हैं कि लोकमान्य ने अपने जीवन के बलिदानों 2 3 पर, मर कर मुकुट चढ़ाया। यही दृश्य देशबन्धु के समय, लालाजी के समय, हकीमजी के समय और मुहम्मद अली के समय देखने को मिला।
>
> मुहम्मद अली की मृत्यु का दुनिया और लन्दन वासियों पर कैसा जबर्दस्त प्रभाव पड़ा! इसका कारण यह है कि वे देश के खातिर विलायत गये थे और देश की सेवा में ही उन्होंने बलिदान दिया। आज भी लोग इसी प्रकार की भावना व्यक्त कर रहे हैं। यह अच्छी बात है। यदि आप इस बात का महत्त्व समझ गये हों तो यह हर्ष भले ही मनाएं। नहीं तो दुनिया हमें मूर्ख कहेगी, और कहेगी कि एक मेले में बिना किसी भावना के मूर्ख व्यक्तियों की तरह लोग इकट्ठा हुए थे। यह तो राष्ट्र-यज्ञ है।
>
> इस अवसर पर आप लोग कोई-न-कोई प्रतिज्ञा करके ही जाएं यही चाहता हूं। देश के लिए जो कुछ हो सकता है उसे करने की स्पष्ट प्रतिज्ञा करके जायं। यदि इतना करें तो धन्यवाद के पात्र होंगे।
>
> 'अब इस अवसर पर आपको एक छोटी-सी मीठी बात सुनाता हूं। पंडितजी तो एक बड़े सिंह थे। उन्होंने जीवन में बड़े-बड़े युद्ध किये थे, वैसे, यमराज के साथ मल्लयुद्ध किया। उसमें पराजित हुए ऐसा [आप] कहेंगे किन्तु मैं नहीं मानता कि वे हारे। इस बीमारी में मैं उनसे मिला करता, पर कई बार वे भी मुझे बुला भेजते थे।

कल उन्होंने मुझे बुलाया। मैंने विनोद किया। डाक्टरों की तो क्या स्तुति करूं? उन लोगों ने सच्ची सेवा की थी। यदि हो सकता तो अपने प्राण देकर भी वे उन्हें जीवित रखना चाहते थे। उन्हें ऐसा विश्वास हुआ था इसीलिए पंडितजी को लखनऊ ले गये। यह विश्वास कोई पंडितजी के शरीर की हालत से नहीं बल्कि पंडितजी की हिम्मत से पैदा हुआ था।

मैंने पंडितजी से कहा "आप अच्छे हो जाएं तो स्वराज मिल गया मानूं।" उन्होंने हंसकर कहा "स्वराज तो मिल गया है।" उनकी जीभ हकलाती थी, किन्तु उनमें इतना कहने लायक शाति थी। उन्होंने स्वराज मिल गया है ऐसा कैसे माना? कारण, 60 हजार लोग जेल गये, इतनी लाठियां चली, इतने बलिदान; फिर स्वराज्य नहीं मिला, यह कैसे कहा जाएगा?

'मैं कल रात उनके पास नहीं गया था, लेकिन पंडिताईन ने मुझे जो बताया वह सुना रहा हूं। उन्हें रामनाम लेने की आदत नहीं थी; कई बार धर्म का मजाक उड़ाते, क्योंकि दम्भ और आडम्बर उन्हें बुरे लगते थे, धर्म के नाम अधर्म करने वालों पर वे क्रुद्ध होते थे। मैं उनके हृदय को पहचानने वालों में था। मैं उन्हें आस्तिक ही समझता था।

कल रात को वे "राम-राम" पुकार रहे थे - पंडितजी के मुंह में "हाय हाय" तो थी ही नहीं। यह तो मेरे जैसे दुर्बल के मुंह में हो सकता है। लेकिन [उसके लिए उनके मुंह में रामनाम भी नहीं था। पर यह रामनाम उन्हें बीते कल याद आया। उन्होंने यह भी कहा कि वे गायत्री तो भूल गये थे - अधर्म देखकर गायत्री पाठ करना छोड़ा था – लेकिन पंडिताइन से उन्होंने कहा कि "मुझे आज गायत्री याद आई है।"

इसका रहस्य यह है कि पंडितजी शुद्ध होकर गये। इस शुद्ध यज्ञ का परिणाम अपने ऊपर यह होना चाहिए कि हम शुद्ध हों। इस महापुरुष ने जिन कारणों से अपने पुत्र, पुत्री, जमाई का बलिदान कर दिया उन कारणों के लिए हमें क्या करना चाहिए वह निश्चय करके यहां से जाइएगा।“

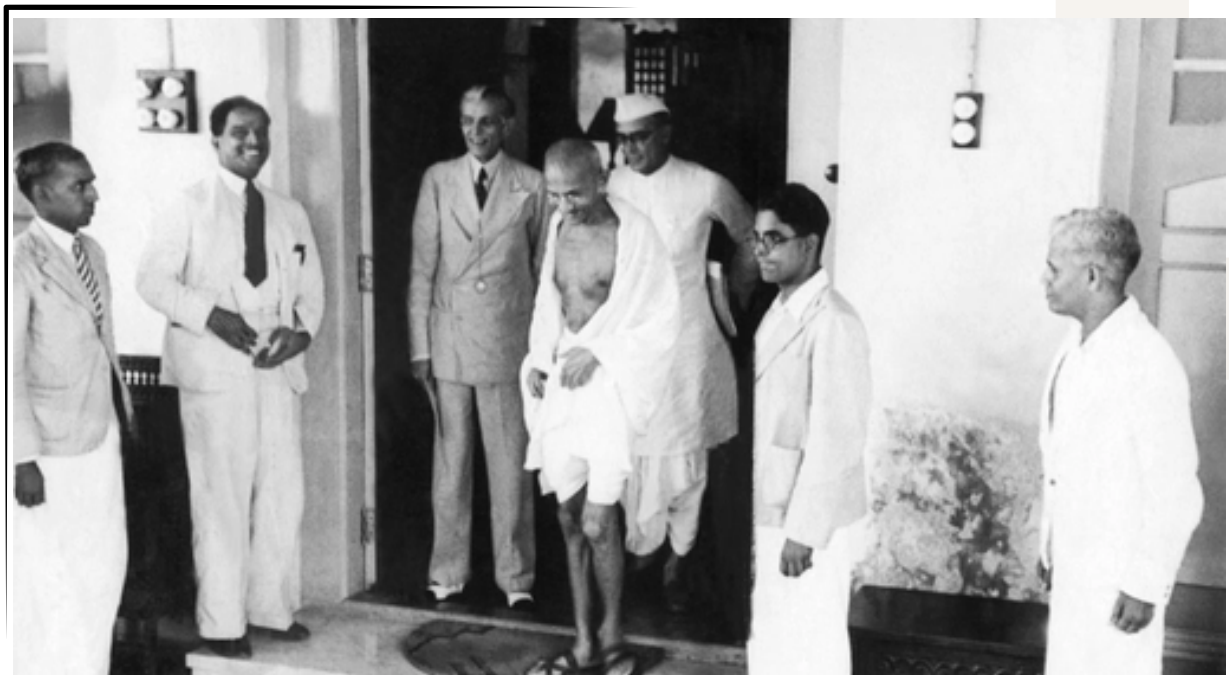

Source: Image

नन्हे-से नैनीताल में पिछले सत्याग्रह के जमाने में काफी संख्या में लोग जेल हो आये हैं, बहुतों ने लाठियां खाई हैं

नैनीताल, *1931*

इसके बाद मई 1931 में गांधीजी नैनीताल आये।नैनीताल के सन्दर्भ में उन्होंने बहुत सुन्दर लिखा है।महादेव भाई उनकी इस यात्रा का बहुत जीवंत वर्णन करते हैं।गांधीजी शिमला और नैनीताल में फर्क की बात करते हैं और उनके बीच समानता की भी। वो कहते हैं कि 'शिमला बड़ा, भारी आबादी वाला शहर है, जबकि नैनीताल 'सरल, शांत, सुरम्य' सरोवरों में झांकती पहाड़ियों से घिरा हुआ एक गांव है ऐसा कहा जा सकता है।'

लेकिन, वो आगे कहते हैं, 'वैसे, शिमला भी राजधानी और नैनीताल भी राजधानी इसलिए शिमला में सत्ता की जो बू आती है उतनी ही नैनीताल में भी आती है।

गोरे लोग जब पहाड़ों पर चढ़ते हैं तो उन्हें कुछ ऐसा मालूम होने लगता है मानो अब वे ही सर्वस्व के मालिक हैं और उन्हीं की बात सही है। इसलिए हम सीधे मैदानों में जितना सत्ता का मद नहीं देखते उतना पांच सौवीं मंजिल पर देखते हैं।

फिर वो लिखते हैं की 'फिर भी नैनीताल और शिमला के वातावरण में बहुत फर्क है। शिमला में अधिक दिनों तक रहने पर हमारे जैसा साधारण आदमी उकता जाएगा, नैनीताल में उकताहट न होगी। शिमला में नैनीताल का सृष्टिसौन्दर्य नजर नहीं आता। नैनीताल जिले का सारा प्रदेश ही 'निरी सरलता' से पूर्ण अनेक सरोवरों के कारण रम्य बना हुआ है।'

नैनीताल की सुन्दरता उन्हें इस कदर भाती है कि वो कहते हैं— "हमारे राजा-महाराजा, जिन्होंने अपनी राजधानी में रहने की कसम खाई होती है, और जिन्हें विदेश में ही जलवायु परिवर्तन के लिए जान पड़ता है, एवं हमारे रसिक जन जो विदेशों के पहाड़ी दृश्यों पर लट्टू हो जाते हैं, उनमें थोड़ा भी देशप्रेम हो तो उन्हें वायुपरिवर्तन या सृष्टिसौन्दर्य के लिए विदेशों में तो कदापि न जाना पड़े।

ऐसा प्रतीत होता है कि इन तालों वाले प्रदेशों से अधिक सुन्दर दृश्य स्काटलैंड या आल्प्स के काव्य-विख्यात पहाड़ों और सरोवरों में न होंगे (यद्यपि मैं कभी स्काटलैंड या आल्प्स गया नहीं हूं।) परंतु आजकल इन दृश्यों पर सरकार का अथवा सरकारी लोगों का एकाधिकार हो गया है, इसलिए वहां गरीब कवि की पहुंच नहीं, और भूतकाल में अनेक ऋषियों के चरणों से ये स्थान पवित्र हो चुके हैं इतनी स्मृति के सिवा हमारे पास अधिक कुछ शेष रहा नहीं।

और फिर भी जिन्हें कालिदास की रचना में 'देवात्मा,' 'नगाधिराज' के वर्णन पढ़ने का अवकाश हो, और उसका रसास्वादन कर पाने जितनी ताजगी, विदेशी भाषा के साहित्य का अध्ययन करने पर भी जिनमें कायम रही हो, उन्हें तो विदेशों में सृष्टिसौन्दर्य की खोज में जाना ही न पड़े।"

लेकिन उन्हें नैनीताल की एक और बात लुभाती है जो उनके जैसे राजनीतिज्ञ के लिए स्वाभाविक ही थी।लेकिन यह प्रसंग यह भी बताते हैं कि गांधीजी जब भी कहीं की यात्रा करते थे तो सिर्फ सभाओं और बैठकों को ही संबोधित नहीं करते थे।बल्कि आम जनता के बीच भी घूम-घूमकर उनकी थाह लेते रहते थे।वो कहते हैं—

'नन्हे-से नैनीताल में पिछले सत्याग्रह के जमाने में काफी संख्या में लोग जेल हो आये हैं, बहुतों ने लाठियां खाई हैं। विदेशी कपड़े का बहिष्कार भी अच्छा हुआ कहा जाएगा। एक कुंजडे की दुकान पर मैं नींबू खरीदने को खड़ा था। उसकी गोद में एक छोटा-सा बालक मोटी खादी पहने लीची चूसता हुआ खेल रहा था। मैं उसके साथ खेलने लगा, इसपर दूकानदार (जिसने स्वयं भी खादी पहनी थी) बोला : 'यह बालक जब मैं जेल में था तब जन्मा था।' मैंने पूछा: 'आप जेल क्यों गये थे?' इसलिए उसने बताया: 'मोतीलालजी की गिरफ्तारी पर हमने जुलूस निकाला, और हममें से चुन-चुन कर 12 लोगों को पकड़ा गया। लगभग डेढ़ महीने तक तो हम हवालात में ही रहे। फिर मुकदमा चला, सजा हुई और जुर्माना भी हुआ। मुझ पर चालीस रूपया जुर्माना किया गया था इसलिए मेरी दुकान पर ताला लगाया गया, सब्जियां और फल बेच डाले गए।'

वह व्यक्ति बातें कर रहा था वहीं एक अखबार बेचनेवाला दुकान के आगे से निकला। उसे बुलाकर दुकानदार ने पहचान कराई: 'यह भाई भी हमारे साथ जेल में थे।' उसी दिन एक आदमी दूध लिये जा रहा था। वह भी सिर से पैर तक खादी पहने था। उसने कहा: 'उस मैदान से जुलूस लेकर जा रहे थे, हम पर लाठियां बरसी थीं। मुझे जेल जाने का सौभाग्य तो प्राप्त नहीं हुआ, परंतु मार पड़ी है सही। यूरोपियनों की सेवा करता था इसलिए जेल नहीं जा सका, पर उसके बाद मैंने वह नौकरी छोड़ी।'

पाठशाला में जानेवाले अनेक बालक यहां खादी की पोशाक में नजर आते हैं। थोड़े में यह कहा जा सकता है कि शिमला में पहाड़ी शिमला और मैदानों वाला शिमला, ऐसे जो दो वर्ग स्पष्ट दिखाई पड़ते हैं, वह बात यहां नहीं पाई जाती। इसलिए नैनीताल जैसी जगह में रहना अधिक सह्य हो जाता है। शासन के दौर और डर के वातावरण में भी यहां विदेशी-वस्त्र-बहिष्कार खूब चला था, और श्री गोविन्दवल्लभ पन्त कहते थे कि नैनी के मन्दिर में तो आज बिना खादी के जाना असम्भव हो गया है। मन्दिर में दर्शनार्थ जानेवाले सभी स्त्री-पुरुष स्वेच्छा से खादी पहन कर ही जाने लगें; तो कितना अच्छा! पन्तजी [के दिये गये] आंकड़ों में शायद कुछ अतिशयोक्ति हो गई हो तो आश्चर्य नहीं; लेकिन बहिष्कार का परिणाम अच्छा आया है यह तो स्पष्ट दिखाई पड़ता है।

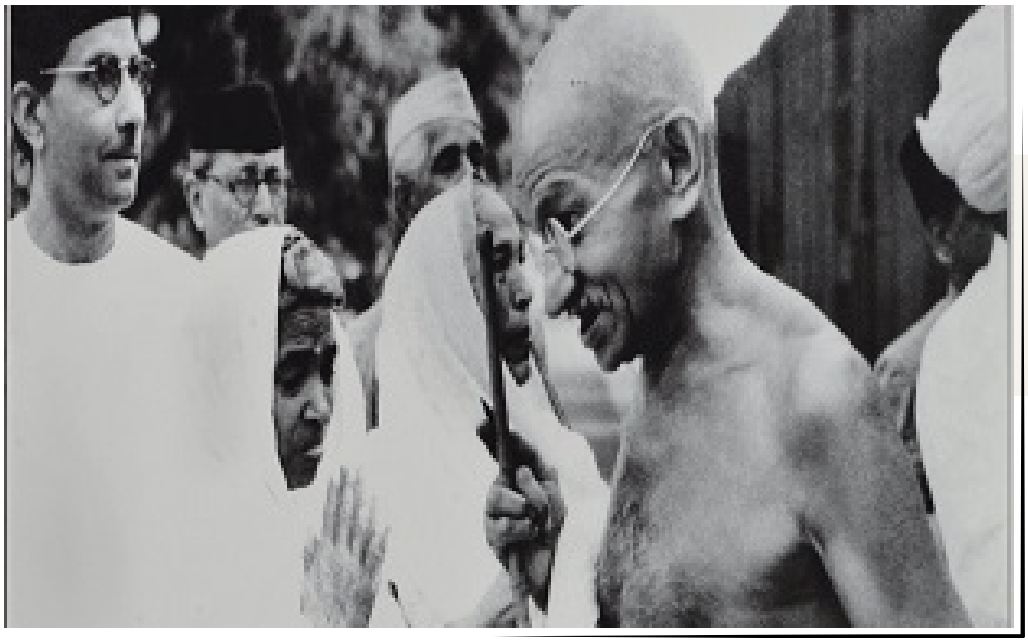

Source: Image

मेरे लिए तो यह विशुद्ध सेवा और प्रायश्चित्त का ही आन्दोलन है

काशी, *1934*

इस बीच एक महत्वपूर्ण घटनाक्रम के तहत गोलमेज सम्मलेन में दलितों के लिए पृथक निर्वाचक मंडलों की व्यवस्था कर दी गई।गांधीजी इसे अंग्रेजों का एक अन्य विभाजनकारी षड्यंत्र मानते थे।इस मुद्दे पर गांधीजी और डॉ अम्बेडकर के बीच एक गतिरोध पैदा हुआ जिसका अंत अंततः पूना पैक्ट के माध्यम से हुआ।लेकिन इस बीच गांधीजी ने दलितों के साथ हो रहे भेदभाव को जड़ से मिटाने को अपना मूल राजनीतिक कार्यक्रम बना लिया। उनका अगला उत्तर प्रदेश दौरा इसी उद्देश्य से 1934 में हुआ।इस दौरान अखिल भारतीय हरिजन सेवक संघ के केन्द्रीय बोर्ड की बैठक काशी में हुई। बैठक के अन्त में सदस्यों को सम्बोधित करते हुए गाँधीजी ने कहा—

"दो प्रश्न हैं जिनके सम्बन्ध में मुझे आप लोगों से कुछ कहना है--एक तो यह कि संघ का गठन किस प्रकार का हो, दूसरे एक ऐसी प्रशिक्षण-संस्था, जिसमें सदस्य या कार्यकर्त्ता हरिजन-सेवा की शिक्षा पा सकें।..।मैं इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि चुनाव या जनतन्त्र-जैसी किसी चीज के लिए हमारे संघ में स्थान नहीं है। हमारी संस्था तो एक भिन्न प्रकार की है। मामूली अर्थ में वह कोई लोक-संस्था नहीं है। हम तो एक प्रकार के ट्रस्टी हैं जिन्हें हमने अपने-आप नियुक्त कर रखा है। पैसा केवल ट्रस्टी के रूप में हम अपने पास रखते हैं और केवल हरिजनों के हितार्थ उसका उपयोग करते हैं और इस ढंग से कि वह सीधे हरिजनों की जेब में जाय।

हमारे संघ का संगठन इस विचार को सामने रखकर हुआ है कि जिन भाइयों को हमने सदियों से तुच्छ मान रखा है, उनके प्रति हम अपना कर्तव्य- पालन करें। जनतन्त्रात्मक संस्था के चलाने में पैसा भी ज्यादा खर्च होगा और काम में देर भी होगी। कुछ लोग कहते हैं कि प्रबन्ध-कार्य में पैसा देनेवालों की भी आवाज होनी चाहिए।

मेरी राय में वे भूलते हैं। मेरी दृष्टि में तो एक पाई देनेवाला और दस से पचास हजार तक देनेवाला समान दाता है।..।घनश्यामदास के दस हजार रुपयों से भी उस एक पाई की कीमत स्यात् अधिक हो। उड़ीसा में मैंने खुद अपनी आँखों देखा है कि वहाँ के गरीव आदमी किस प्रकार अपने फटे- पुराने चीथड़ों की गाँठ में बड़े जतन से बँधे हुए पैसे-पाई को बड़े प्रेम से हमारी झोली में डालते थे।

हजारों रुपयों की अपेक्षा..।मुझे तो गरीब की गाँठ की वह कौड़ी ही पाकर अधिक आशा और प्रसन्नता हुई है। आत्मशुद्धि के इस यज्ञ में गरीब की कौड़ी के विना हजारों की थैलियाँ किसी अर्थ की नहीं। किन्तु आपके उस जनतन्त्र में उन हजारों गरीबों को तो वोट मिलेगा नहीं; प्रबन्ध में उन बेचारों की तो आवाज होगी नहीं। हम उनके नाम तक तो जानते नहीं।

फिर भी हमारा उनके प्रति उतनी ही या उससे भी अधिक जवावदेही है, जितनी हजारों की थैलियाँ देने वाले बड़े-बड़े धनियों के प्रति। हमारी तो यह एक दातव्य संस्था है, जिसका अस्तित्व प्रामाणिक और योग्य प्रबन्ध पर निर्भर करता है। मेरे लिए तो यह विशुद्ध सेवा और प्रायश्चित्त का ही आन्दोलन है।

काशी की एक सार्वजनिक सभा में उन्होंने कहा—

> "...हरिजन आन्दोलन धार्मिक आन्दोलन है। इसमें दुराग्रह को स्थान नहीं है। मैं कितना ही जतन क्यों न करूँ, मुझसे भी गलतियाँ हो सकती हैं और हुई भी हैं। जिस रूप में अस्पृश्यता इस समय मौजूद है, उसके लिए शास्त्र में स्थान नहीं है।
>
> अस्पृश्यता हिन्दू धर्म पर कलंक है।..।जलाशय पर एक कुत्ता भले ही चला जाय, परन्तु प्यासा हरिजन बालक वहाँ नहीं जा सकता। यदि गया तो मार खाने से बच नहीं सकता। इस समय की अस्पृश्यता मनुष्य को कुत्ते से भी हीन मानती है। ऐसी अस्पृश्यता को शास्त्रसम्मत न मेरी बुद्धि मान सकती है, न मेरा हृदय।"

Source: Image

Source: Image

आज तो हम 'हिंदू धर्म' को भूल बैठे हैं

कानपुर, *1934*

अपनी हरिजन यात्रा के इसी क्रम में वो कानपुर पहुंचे और यहाँ उन्होंने एक अन्य बहुत महत्वपूर्ण सार्वजनिक भाषण दिया।

"आपने मुझे जो यह 11,000 रुपये की थैली दी है, उसके लिए मैं आपका आभारी हूं। लेकिन मैं आपके कानपुर शहर को नहीं जानता, यह बात तो नहीं है। मैं समझता हूं कि जो हरिजन कार्य हमारे सामने है, उसकी महत्ता को अगर आपने महसूस किया होता, तो मुझे इससे कई गुना अधिक धन आप देते।

"आपने मुझे हजारों की जगह लाखों रुपये दिए होते, अगर आपने इस हरिजन प्रवृत्ति का महत्व समझा होता। पर धन तो अस्पृश्यता का अंत नहीं कर सकता। यह तो तभी हो सकता है, जब सवर्ण हिंदूओं के हृदय पिघल जाएं। दान देनेवालों ने यदि यह अनुभव कर लिया है कि अस्पृश्यता धर्म पर एक कलंक है, तो उनके दान का महत्व सैकड़ों गुना बढ़ जाता है। यह तो आत्मशुद्धि की प्रवृत्ति है।

संख्या से इस प्रवृत्ति का कोई मतलब नहीं। अगर हमें कामयाबी मिली तो इससे हमें और सारी दुनिया को लाभ पहुंचेगा। धर्म के नाम पर अपने पांच करोड़ भाइयों के प्रति हम जो अत्याचार कर रहे हैं, उसके लिए अगर दुनिया हमसे और हमारे धर्म से घृणा करे तो यह उचित ही है। यदि कोई शुद्ध रीति से शास्त्रों को, गीता को और वेदों को पढ़े तो उन धर्मग्रंथों में उसे कहीं भी अस्पृश्यता नहीं मिलेगी। आज तो हम 'हिंदू धर्म' को भूल बैठे हैं। हरिजनों के प्रति जो हमने अपराध किया है, जो पाप किया है, उसके प्रायश्चित के लिए ही यह हरिजन आंदोलन चलाया गया है।

"काली झंडियां दिखलाने वालों का मुझे उतना ही ख्याल है, जितना कि सुधारकों का और अगर संभव होता तो मैं उनकी बात को मान लेता और जैसा वे चाहते, खुशी से करता। पर सत्य अनुकूल ही आचरण करना मैं अपना धर्म समझता हूं। धर्म को कैसे छोड़ दूं? ईश्वर क्या कहेगा? सवर्ण हिंदू मेरा निरादर करें, मेरे ऊपर पत्थर फेंकें, रिवाल्वर चलाएं पर ऐसी बातों से मैं डिगने का नहीं।

धर्म के कार्य से अगर मैं छूट जाऊं तो ईश्वर कहेगा कि क्या तेरा शरीर अमर है? नहीं तो फिर क्यों डर गया? मैं भी तो आखिर को एक अपूर्ण मनुष्य ही हूं। मैं कोई तपस्वी तो हूं नहीं कि एक की फूंक हिमालय पर बैठकर मार दूं, तो अस्पृश्यता उड़ जाए। पर मेरे जैसा अल्पज्ञानी भी कुछ करना चाहता है। जो लोग मेरी बात सुनना चाहते हैं, उन्हें मैं सिर्फ सुना सकता हूं और इसी कारण मैं जगह-जगह भ्रमण कर रहा हूं, यद्यपि इस लगातार लंबी यात्रा की थकान दूर करने के लिए अब मैं कहीं बैठकर आराम करना चाहता हूं।

"जो सनातनी धर्म का इजारा लेकर बैठ गए हैं, उनसे मैं यह कह देना चाहता हूं कि जिन शास्त्रों को वे मानते हैं, मैं भी उन्हीं को मानता हूं। पर हमारा मतभेद तो शास्त्रों के अर्थ लगाने में है। जब अर्थ का विरोध हो, तो शास्त्र कहते हैं कि अपने विवेक को प्रमाण मानो।

और मैं ठीक यही कर रहा हूं। अगर वे मुझे यह समझा दें कि मैं गलती कर रहा हूं, तो मैं आखिरी दम तक यही कहता रहूंगा कि यदि हमने अस्पृश्यता के कलंक को न धो डाला, तो हिंदू जाति और हिंदू धर्म का दुनिया से लोप हो जाएगा।

"अब हरिजन आंदोलन के संबंध में मुझे कुछ बातें स्पष्ट कर देनी चाहिए। ऊंच-नीच के भाव तक ही यह आंदोलन सीमित है, रोटी-बेटी संबंध से इसका कोई वास्ता नहीं। मैं तो अपने को भंगी मानता हूं। इसमें मेरे लिए कोई शर्म की बात नहीं, पर इसमें मेरा स्वेच्छाचार नहीं हैं, संयम है। और ऐसा करने को मैं आपसे नहीं कहता।

मैं शास्त्रं के बाहर नहीं जाता। मैं तो अपनी इस बात को भी शास्त्र-विहित ही मानता हूं। रोटी-बेटी संबंध के व्यक्तिगत संयम के प्रचार करने की न तो आवश्यकता है, न समय। मैं तो सिर्फ धर्म का तत्व ही लोगों के सामने रख रहा हूं। इस आंदोलन का तो यही उद्देश्य है कि जो सामाजिक, नागरिक और धार्मिक हक दूसरे सवर्ण हिंदुओं को मिले हुए हैं, वही सव हरिजनों को भी मिलने चाहिए।

"मंदिर प्रवेश के विषय में यह बात है कि जब तक किसी मंदिर में पूजा करने वाले सवर्ण हिंदूओं का काफी बहुमत न हो, तब तक वह मंदिर हरिजनों के लिए न खोला जाए। मंदिर तो हमारे प्रायश्चित स्वरूप ही खुलने चाहिए। मैं यहां यह कह देना चाहता हूं कि एक पाई भी इस हरिजन फंड से मंदिरों के बनाने में खर्च नहीं की जा सकती। हमारा सतत प्रयत्न तो यह है कि इस फंड का पैसा, जिस तरह हो सके, अधिक-से-अधिक हरिजनों की ही जेब में जाए।“

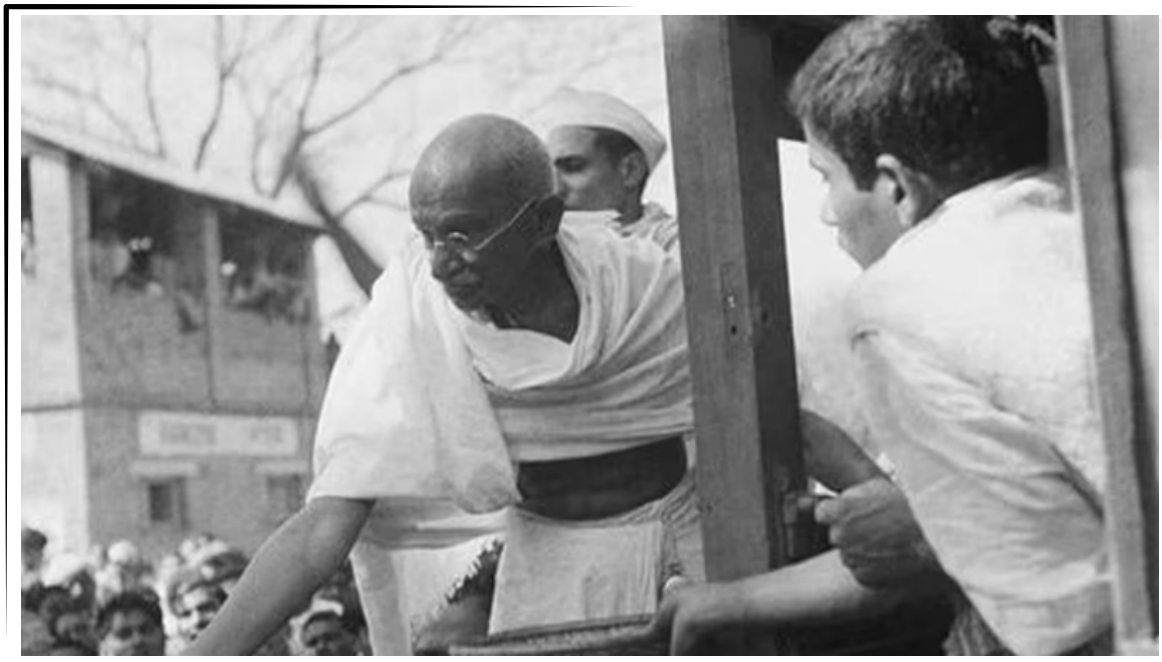

Source: Image

इसके बाद गांधीजी 1936 में फिर उत्तर प्रदेश आये।इस वर्ष का कांग्रेस अधिवेशन लखनऊ में हुआ था।लेकिन गांधीजी कांग्रेस अधिवेशन में शामिल नहीं हुए।

हालाँकि इस मौके पर चरखा संघ और अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघ ने एक विशाल ग्रामीण प्रदर्शनी लगाईं थी। यह एक नई तरह की प्रदर्शनी थी।इसके उदघाटन के मौके पर गांधीजी ने इसके उद्देश्य को स्पष्ट किया—

"..।इस तरह की प्रदर्शनी के बारे में बरसों से अपने दिल में जो कल्पना मैं रखता आया था, उसको मैं इस प्रदर्शनी में देखता हूँ। 1920 में पहली बार हमारा ध्यान गाँवों की ओर गया।..। अहमदावाद की कांग्रेस के साथ जो प्रदर्शनी हुई थी, उसमें मैंने इस विषय में, अपनी कुछ कल्पनाओं को मूर्त रूप देने की चेष्टा की थी।

..।मैंने सदा ही कहा है कि हिन्दुस्तान हमारे चन्द शहरों से नहीं, सात लाख गाँवों से बना है।..। इन देहातों की जो हालत है, उसे मैं खूब जानता हूँ। मेरा खयाल है कि हिन्दुस्तान को घूमकर जितना मैंने देखा है, उतना कांग्रेस के नेताओं में से किसी ने नहीं देखा है। हिन्दुस्तान के देहातों को शहरवालों ने इतना चूसा है कि उन बेचारों को अव रोटी का एक टुकड़ा भी समय पर नहीं मिलता।

उन्हें अगर चावल मिलता है तो दाल नहीं मिलती और रोटी मिलती है तो साग-भाजी नहीं मिलती। कहीं तो सिर्फ सत्तू खाकर जीते हैं। खादी के अलावा दूसरे भी अनेक धन्धे हैं, जो गाँव वालों के जीवन के लिए बहुत आवश्यक और उपयोगी हैं और जिनसे उनकी हालत, एक वड़ी सीमा तक सुधारी जा सकती है । इसके लिए हमें यह देखना है कि देहातवाले कैसे रहते हैं, क्या काम करते हैं और उनके काम को कैसे तरक्की दी जा सकती है।

...।इस बार की प्रदर्शनी अपने ढंग की पहली प्रदर्शनी है। इसकी रचना के पीछे कल्पना मेरी है। इस नुमाइश के जरिये हम दिखाना चाहते हैं कि भूख से बेहाल इस हिन्दुस्तान में भी आज ऐसे हुनर, उद्योग- धन्धे और कलाकौशल मौजूद हैं, जिनका हमें कभी खयाल भी नहीं होता। इस नुमाइश की यही विशेषता है।

..।इसे कुछ सीखने की दृष्टि से देखें, तमाशे की दृष्टि से नहीं। जो एक बार इस नुमाइश को देख लेगा, उसे फौरन ही पता चल जायगा कि हिन्दुस्तान के देहातों में अब भी कितनी ताकत भरी पड़ी है। देहातों की इस ताकत को पहचान कर जो 28 करोड़ देहातियों की सेवा करता है, वही कांग्रेस का सच्चा सेवक है। जो इन करोड़ों की सेवा नहीं करता, वह कांग्रेस का सरदार या नेता हो सकता है, सेवक या बन्दा नहीं बन सकता।"

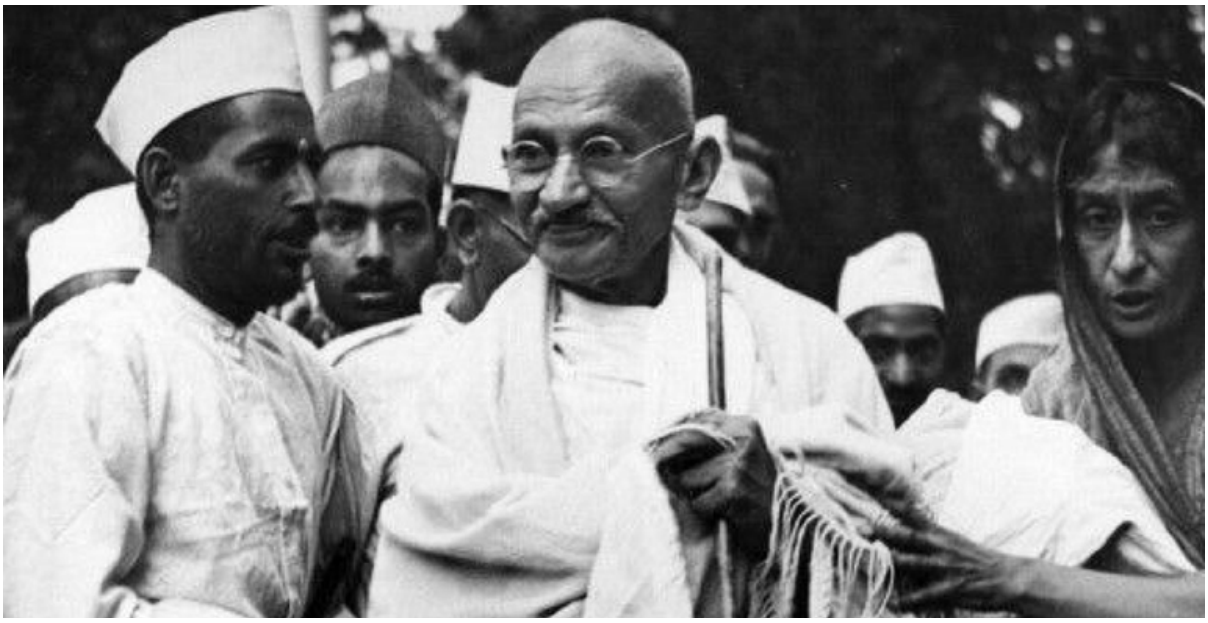

Source: Image

1941 में गांधीजी उत्तर प्रदेश आये।इस समय विश्वयुद्ध चल रहा था।कांग्रेस के भीतर नए आंदोलन को लेकर बहस चल रही थी।इस दौरान वो उत्तर प्रदेश आये और कुछेक स्थानों पर विशेष प्रयोजनों से पहुंचे।जैसे इलाहाबाद में कमला नेहरु अस्पताल के उद्घाटन और काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के रजत जयंती समारोह के लिए।

लेकिन इसके बाद वो व्यक्तिगत सत्याग्रह और फिर भारत छोड़ो आंदोलन में व्यस्त हो गए।हालाँकि 1942 की जनवरी में वो थोड़े समय के लिए उत्तर प्रदेश आये लेकिन उसके बाद भारत छोड़ो आंदोलन की घोषणा करते ही उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया और फिर सरकार के साथ सत्ता हस्तांतरण की बातचीत के लिए ही उन्हें रिहा किया गया।शिमला सम्मलेन की थकान भरी बातचीत के बाद डॉक्टर्स ने उन्हें विश्राम लेने को कहा।गांधीजी ने इस बार मंसूरी में रूककर स्वास्थ्य लाभ लेने का निर्णय किया।

मई के अंतिम सप्ताह में वो मंसूरी पहुंचे लेकिन उथलपुथल भरे दौर में उन्हें 10 जून को दिल्ली लौट गए।यह गांधीजी की अंतिम उत्तर प्रदेश यात्रा थी।इसके बाद अगस्त 1946 में कलकत्ता से शुरू हुए दंगों के बाद गांधीजी शान्ति स्थापना के प्रयासों में उलझे रहे।भारत को आज़ादी मिली लेकिन उसके साथ भारत का बँटवारा भी हो गया।भारत के अब दो टुकड़े हो गए थे— भारत और पाकिस्तान।

देश में सांप्रदायिक विभाजन चरम पर पहुँच गया था।गांधीजी बंगाल से लेकर दिल्ली तक सांप्रदायिक पागलपन से जूझते रहे।लेकिन सांप्रदायिक सोच में उन्मत्त एक मदांध व्यक्ति ने 30 जनवरी 1948 को गोली मारकर उनकी हत्या कर दी।यह बीसवीं सदी के महानतम राजनेता, जननायक, महात्मा और हिन्दू का अंत था.

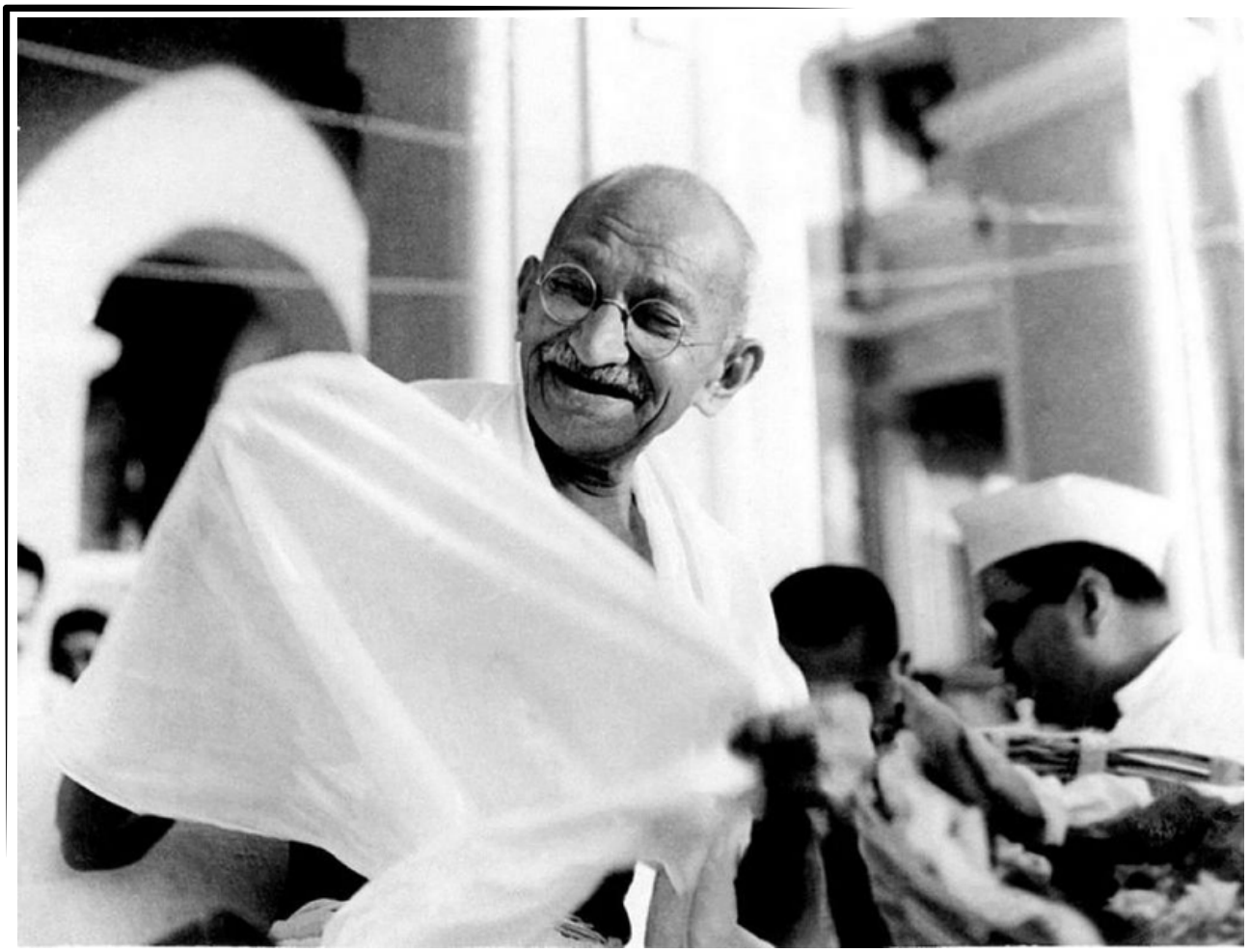

Source: Image

गांधीजी के उत्तर प्रदेश आगमन का तिथि-क्रमवार विवरण

संकलन- डॉ. सत्यव्रत सिंह

यह तिथिक्रम गांधीजी के उत्तर प्रदेश, जिसे तब आगरा और अवध का संयुक्त प्रान्त कहा जाता था, के विभिन्न दौरों का क्रमवार विवरण है।

1896

जुलाई 5 : अकस्मात् प्रयाग-आगमन, "पायोनियर"-सम्पादक से भेंट, संगम स्नान-दर्शन ।

1902

फरवरी 22 या 23: काशी-आगमन, पण्डे के घर टिके, विधि- वत गंगा-स्नान, श्रीविश्वनाथ-दर्शन, एवं श्रीमती एनीबेसेण्ट से भेंट ।

1915

अप्रैल 5 : कुम्भ मेले में हरिद्वार पहुँचे ।
अप्रैल 6 : गुरुकुल काँगड़ी में महात्मा मुंशीराम से भेंट ।
अप्रैल 6 : गुरुकुल काँगड़ी में महात्मा मुंशीराम से भेंट ।
अप्रैल 7 : ऋषिकेश, लक्ष्मण-झूला और स्वर्गाश्रम की यात्रा ।
अप्रैल 8 : गुरुकुल काँगड़ी के ब्रह्मचारियों द्वारा स्वागत ।
अप्रैल 9 : सूर्योदय के पूर्व आहार और उसमें केवल 5 वस्तुएँ लेने का व्रत ।
अप्रैल 14 : मथुरा-वृन्दावन की यात्रा ।

1916

फरवरी 3 : काशी-आगमन, श्रीविश्वनाथ-दर्शन ।
फरवरी 4 : हिन्दू विश्वविद्यालय में भाषण ।
फरवरी 5 : काशी नागरी-प्रचारिणी सभा में भाषण ।
फरवरी 6-7 : काशी में विविध कार्य ।
मार्च 18 : हरिद्वार । गुरुकुल के अछूतोद्धार सम्मेलन में भाषण ।
मार्च 16 : हरिद्वार में स्फुट कार्य ।
मार्च 20 : गुरुकुल के वार्षिकोत्सव में भाषण ।
मार्च 21-22 : हरिद्वार में स्फुट कार्य ।
मार्च 23 : आर्य-समाज भवन हरिद्वार में भाषण ।
दिसम्बर 22 : म्योर कालेज इलाहाबाद में भाषण ।
दिसम्बर 23 : इलाहावाद की सार्वजनिक सभा में भाषण ।
दिसम्बर 26-30 : लखनऊ कांग्रेस में शामिल हुए ।
दिसम्बर 28 : लखनऊ कांग्रेस में गिरमिटिया समस्या पर प्रस्ताव रखा ।
दिसम्बर 26 : लखनऊ । अखिल भारतीय एक-भाषा और एक-लिपि सम्मेलन की अध्यक्षता ।
दिसम्बर 30 : लखनऊ । विविध कार्य ।
दिसम्बर 31 : लखनऊ । मुस्लिम-लीग अधिवेशन में हिन्दू- मुस्लिम ऐक्य पर भाषण ।

1917

अक्टूबर 6 : इलाहाबाद । भारतीय कांग्रेस कमेटी और भारतीय मुस्लिम लीग की परिषद् की संयुक्त बैठक में शामिल हुए ।
नवम्बर 28 : अलीगढ़ । लायल पुस्तकालय के मैदान और अलीगढ़ कालेज में छात्रों के समक्ष भाषण ।

1919

मार्च 11 : लखनऊ में सत्याग्रह पर भाषण ।
मार्च 11 : इलाहाबाद में सत्याग्रह पर भाषण ।

1920

जनवरी 20 : इलाहाबाद । मोतीलाल नेहरू से भेंट ।
जनवरी 21 : कानपुर । स्वदेशी भण्डार का उद्घाटन ।
जनवरी 22 : मेरठ । जुलूस; आम जनता, नगरपालिका तथा खिलाफत कमेटी की ओर से मानपत्र । सार्वजनिक सभा तथा स्त्रियों की सभा में भाषण ।
जनवरी 22 : मुजफ्फरनगर । रात को 11 बजे सभा ।
फरवरी 20 : वाराणसी । पंजाब के उपद्रवों पर कांग्रेस की रिपोर्ट का मस्विदा अध्यक्ष मोतीलाल नेहरू को प्रेषित।
फरवरी 21 : वाराणसी । हिन्दू विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों की सभा में भाषण ।
मई 30 : वाराणसी । अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक में भाग लिया ।
मई 31 : वाराणसी-इलाहाबाद ।
जून 1 : इलाहाबाद । संयुक्त हिन्दू-मुस्लिम सम्मेलन में भाग ।
जून 62 : इलाहाबाद ।
जून 3 : इलाहावाद । केन्द्रीय खिलाफत कमेटी की बैठक में असहयोग पर भाषण ।
अक्टूबर 11 : मुरादाबाद । संयुक्त प्रान्तीय सम्मेलन में भाषण ।
अक्टूबर 12 : अलीगढ़ । विद्यार्थियों से भेंट ।
अक्टूबर 14 : कानपुर । भाषण ।
अक्टूबर 15 : लखनऊ । भाषण ।
अक्टूबर 17 : बरेली । नगरपालिका में अभिनन्दन ।
नवम्बर 20-2 1 : झाँसी । भाषण ।
नवम्बर 23 : अलीगढ़ । वहाँ होकर आगरा । सार्वजनिक सभा और विद्यार्थियों की सभा में भाषण ।
नवम्बर 25, 26, 27 : वाराणसी ।
नवम्बर 26 : काशी विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों की सभा तथा सार्वजनिक सभा में भाषण ।
नवम्बर 28 : इलाहावाद । सार्वजनिक सभा में भाषण ।
नवम्बर 26 : इलाहाबाद । महिलाओं की सभा में भाषण ।
नवम्बर 30 : इलाहाबाद । विद्यार्थियों की सभा में भाषण ।
दिसम्बर 1 : इलाहाबाद । तिलक विद्यालय का उद्घाटन और भाषण ।

1925

अक्टूबर 16 : बलिया । जिला परिषद् में भाषण ।
अक्टूबर 17 : वाराणसी । काशी विद्यापीठ की सभा में भाषण ।
अक्टूबर 17 : लखनऊ । दो सभाओं में भाषण ।
अक्टूबर 17 : सीतापुर । हिन्दू सभा और वैद्य सभा-द्वारा अभिनन्दन । नगरपालिका द्वारा मानपत्र ।
अक्टूबर 18 : सीतापुर । हिन्दी-साहित्य सम्मेलन में भाषण ।
अक्टूबर 18 : सीतापुर । संयुक्त प्रान्तीय राजनीतिक सम्मेलन में चरखा और खादी पर भाषण ।
अक्टूबर 18 : सीतापुर । अस्पृश्यता-विरोधी सम्मेलन में भाषण ।
दिसम्बर 23 : कानपुर पहुँचे ।
दिसम्बर 24 : कानपुर । स्वदेशी प्रदर्शनी का उद्घाटन ।
दिसम्बर 25 : कानपुर । कांग्रेस-अधिवेशन में दक्षिण अफ्रीका के भारतीयों से सम्बन्ध रखनेवाला प्रस्ताव ।
दिसम्बर 26 : कांग्रेस-अधिवेशन में भाषण । 'जमाना' को सन्देश ।
दिसम्बर 27 : कानपुर ।
दिसम्बर 28 : कानपुर । मौन-दिवस ।
दिसम्बर 26 : कानपुर । एसोसियेटेड प्रेस आफ इण्डिया के प्रतिनिधि से भेंट ।

1927

जनवरी 7-8 : वाराणसी । गाँधी आश्रम के वार्षिकोत्सव में शामिल हुए ।
जनवरी 6 : वाराणसी । दशाश्वमेध घाट पर गंगास्नान तथा स्व0 स्वामी श्रद्धानन्द को जलाञ्जलि ।
मार्च मध्य : गुरुकुल काँगड़ी के रजतजयन्ती महोत्सव में शामिल हुए ।

1926

जून 13 : बरेली । सभा में भाषण ।
जून 14 : हलद्वानी और ताकुला । भाषण । नैनीताल ।
जून 15 : नैनीताल । महिलाओं की सभा में भाषण ।
जून 15 : भवाली । सार्वजनिक सभा ।
जून 16-18 : ताड़ीखेत । प्रेम विद्यालय के वार्षिकोत्सव में शामिल हुए ।
जून 18 : अल्मोड़ा, नगरपालिका का मानपत्र-ग्रहण
जून 18 से जुलाई 2 तक: अल्मोड़ा और कौसानी में विश्राम
सितम्बर 11 से 2 0 तक : आगरा, मथुरा, अलीगढ़ इत्यादि ।
सितम्बर 20 : मैनपुरी
सितम्बर 2 1 : फर्रुखाबाद
सितम्बर 2 2 : कन्नौज
सितम्बर 2 2 -2 4 : कानपुर
सितम्बर 2 5-2 6 : वाराणसी
सितम्बर 2 7-2 9 : लखनऊ
सितम्बर 30 से अक्टूबर 1 : फैजाबाद
अक्टूबर 2 : बनारस
अक्टूबर 2 -3 : गाजीपुर

अक्टूबर 3 : आजमगढ़
अक्टूबर 4-7 गोरखपुर
अक्टूबर 8-6 : बस्ती
अक्टूबर 8-10 : गोंडा
अक्टूबर 10 : बाराबंकी
अक्टूबर 10 : बाराबंकी
अक्टूबर 10-11 : हरदोई
अक्तूवर 11 : शाहजहाँपुर
अक्टूबर 11-12 : मुरादाबाद
अक्टूबर 13 : धामपुर
अक्टूबर 13-14 : नगीना
अक्तूवर 15 :हरिद्वार
अक्टूबर 16-17 : देहरादून
अक्टूबर 18 : मसूरी । 15 दिन विश्राम ।
नवम्बर 4 : अलीगढ़
नवम्बर 8 : वृन्दावन
नवम्बर 11 : शाहजहाँपुर
नवम्बर 14 : कालाकाँकर
नवम्बर 15-18 : इलाहाबाद
नवम्बर 24 : उत्तर प्रदेश (संयुक्त प्रान्त) से प्रस्थान ।

1931

फरवरी 2 -16 : इलाहावाद
मई 16-21 : नैनीताल

1934

जुलाई 22-26 : कानपुर
जुलाई 22 : कानपुर । नगरपालिका और जिलापरिषद् के
जुलाई 22-26 कानपुर
जुलाई 22 : कानपुर । नगरपालिका और जिलापरिषद् के मानपत्र; सार्वजनिक सभा ।
जुलाई 23 : कानपुर । मौन-दिवस,
जुलाई 24 : कानपुर । तिलक हाल का उद्घाटन; हरिजन- सेवक संघों के कार्यकर्ताओं से भेंट; विद्या- थियों की सभा; सनातन धर्म कालेज के विद्या- थियों का मानपत्र ।
जुलाई 25 : कानपुर । लखनऊ जाना-आना । लखनऊ में महिला-सभा, वाल-सभा तथा सार्वजनिक सभा । कानपुर : विविध जिलों की थैलियाँ; जिला हरिजन सेवक संघों के प्रतिनिधियों से मुलाकात; प्रान्तीय आर्य-प्रतिनिधि सभा का मानपल; हरिजन-वस्तियों का निरीक्षण; गुजरातियों का मानपत्र ।
जुलाई 26 : कानपुर । कांग्रेसवालों, जिले के हरिजन कार्य- कत्र्ताओं तथा संयुक्तप्रान्तीय खादी-विक्रेताओं से भेंट; महिला-सभा; हरिजन-बस्तियों का निरीक्षण ।
जुलाई 27 : वाराणसी । सार्वजनिक कार्य ।
जुलाई 28 : वाराणसी । सार्वजनिक कार्य; काशी विद्यापीठ द्वारा स्वागत !

जुलाई 26 : वाराणसी । जिलों के प्रतिनिधि-मण्डलों से मुलाकात; हरिजन सेवक संघ के केन्द्रीय बोर्ड की बैठक।
जुलाई 30 : वाराणसी । मौन-दिवस ।
जुलाई 31 : वाराणसी । हरिजन विद्यार्थियों का मानपत्र; सार्वजनिक सभा ।
अगस्त 1 : वाराणसी । हिन्दू विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों का मानपत्र; हरिजन कार्यकर्ताओं की बैठक;
अगस्त 1 : वाराणसी । हिन्दू विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों का मानपत्न; हरिजन कार्यकत्र्ताओं की बैठक; हरिजनों की सभा; कांग्रेसवालों की बैठक ।
अगस्त 2 : वाराणसी । हरिजन-बस्तियों तथा कबीर-मठ का निरीक्षण; काशी की पण्डित-मण्डली का मानपत्र; महिलाओं की सभा ।

1936

मार्च 28 : लखनऊ । ग्रामोद्योग प्रदर्शनी का उद्घाटन । 12 अप्रैल तकः लखनऊ में विविध कार्य ।
अक्टूबर मध्य भाग : वाराणसी । भारतमाता के मन्दिर का उद्घाटन । कला-भवन का निरीक्षण ।

1936

नवम्बर 17 से नवम्बर 23 तक : इलाहावाद । भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक ।
नवम्बर 19 : इलाहाबाद । कमला नेहरू अस्पताल का शिलान्यास ।

1941

फरवरी 28 : इलाहाबाद । कमला नेहरू अस्पताल का उद्घाटन ।
जनवरी 21 : वाराणसी । हिन्दू विश्वविद्यालय के जयन्ती समारोह में ।

1942

जनवरी 22 : वाराणसी । कांग्रेस कार्यकर्ताओं से भेंट ।

1946

मई 25-26 : मसूरी। 6 जून तक मसूरी में रहे।

February 2023